अन्तराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन
गिरमिटिया देश और आर्यसमाज

आर्योदय

स्मारिका

जुलाई, 2023

विषय-सूची

Contents

पृष्ठ / Page

यशोगृहित्वा पृथिवीमनुसंचरेमकृ -- *स्वामी प्रणावानन्द सरस्वती जी महाराज* 2
सन्देश -- *श्री राजेंद्र प्रसाद रामजी, प्रधान आर्य सभा मॉरीशस* 3
A Duty of Memory— *Shri Mithyl Banymandhub,M.A,B.Ed* 4
From the Chief Editor's Desk — The Legacy of the Arya Samaj
Dr Oudaye Narain Gangoo, GOSK, Arya Ratna 5
आर्य समाज एवं गिरमिटिया मज़दूर - *स्वामी आर्यवेश* 6-8
Arya Samaj in Guyana — *Acharya Bramdeo Mokoonlall* 9-10
फीजी में हिन्दी — श्री रमेश चंद 11
Arya Samaj Contribution to the uplift of the indentured Labourers in Mauritius — *Dr Vidoor Dilchand* 12-13
हिन्दी साहित्य के सृजन में सूरीनामी हिन्दुस्तानियों का योगदान —
डॉ० मोहन कां० गौतम, लायडन, नीदरलैण्ड्स 13-15
मॉरिशस : मेरा घर — *डॉ० कमल किशोर गोयनका* 16
साक्षात्कार — *श्री विशाल भोला और डॉ० माधुरी रामधारी* 16-18
The Great Experiment — *Dr Poornasha Mohabeer* 19
आर्य समाज के मूर्धन्य संन्यासी : आचार्य स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती —
आचार्य जितेन्द्र पुरुषार्थी 20-22
Girmitiya Diaspora and Arya Samaj—*Shri Rajnarain Guttee, Organising Secretary* 23
दक्षिण अफ्रीका में स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा हिन्दी का प्रचार —
डॉ० रामभजन सीताराम, डर्बन-वेस्टविल्ल विश्वविद्यालय 24-26
Arya Samaj in Countries of Indian Diaspora - The Mauritian Case —
Mrs Artee Paupiah 27
प्रवासी भारतीय और आर्य समाज — *डॉ० लालदेव अंचराज* 28
Girmitiya in Fiji — *Luxhmee Jaypaul* 29-30
कविता—गिरमिटिया— *लक्ष्मी जयपोल* 30
त्रिनिदाद और टोबैगो में आर्य समाज — *डॉ० सोमदत्त काशीनाथ* 31-32
The Legacy of Arya Samaj in Countries of Indian Diaspora -
Shri Surensing Runglall 33
श्रीमती उमा दुखन — मॉरीशस के विकास में आर्य समाज का योगदान 34
Arya Samaj in Mauritius — A country of the Indian Diaspora —
Shri Rajveer Awotar 35
गिरमिटिया देशों में आर्य समाज — *पंडिता लीलामणी करीमन* 36
International Girmitiya Conference 2023 — *Shri Raj Sobrun,MSc* 37
गिरमिटिया हिन्दी साहित्य — *डॉ० इन्द्रदेव भोला, इन्द्रनाथ, आर्य शिरोमणि* 38
श्रावणी पर्व का संदेश— *स्वामी आशुतोष* 39
धार्मिक एवं सामाजिक उत्थान में बैठकाओं का योगदान —
श्री बालचन्द तानाकूर, ओ.एस.के., आर्य रत्न 40-41
स्वामी दयानन्द अद्वितीय समाज सुधारक — श्री *सत्यदेव प्रीतम, जी०ओ०एस०के०, सहसम्पादक, आर्योदय* 41–42
धर्म-परिवर्तन क्यों ? - *पंडित कविराज खेद* 42
Tyack Arya Samaj — Satyarth Prakash Month —
Shri Sarvam Nuckcheda 43
श्रावण मास का संदेश — *पंडिता अनीता छोटी* 44
सत्यार्थप्रकाश ज्ञान का भण्डार — *श्री जयपति पुनीत* 45-46
ओ३म् ॥ अग्ने गृहपते — *पंडिता राजवंश सॉलिक* 47
सत्यार्थप्रकाश में १४ समुल्लास — पंडित धर्मेन्द्र रिकाई 48
Loneliness — *Shri Sookraj Bissessur* 48

आर्योदय

स्मारिका

ARYODAYE

Magazine

Arya Sabha Mauritius

1, Maharshi Dayanand St., Port Louis

Tel : 212-2730, 208-7504

Fax : 210-3778

Email : aryamu@intnet.mu

www.aryasabhamauritius.mu

प्रधान सम्पादक - Chief Editor

डॉ० उदय नारायण गंगू, *पी.एच.डी., ओ.एस.के.,जी.ओ.एस.के.,आर्य रत्न*

Dr Oudaye Narain Gangoo,

Ph.D, O.S.K., G.O.S.K.,Arya Ratna

सम्पादक - Editor

श्री बालचन्द तानाकूर, *पी.एम.एस.एम, ओ.एस.के., आर्य रत्न*

Shri Balchand Tanakoor,

P.M.S.M, O.S.K., Arya Ratna

सह सम्पादक - Editor

श्री सत्यदेव प्रीतम, *बी.ए., ओ.एस.के, सी.एस.के.,जी.ओ.एस.के.,आर्य रत्न*

Shri Satyadeo Peerthum, *B.A., O.S.K.,C.S.K.,G.O.S.K., Arya Ratna*

सम्पादक मण्डल - Editorial Team

(१) श्री मिथिल बेणीमण्डब,एम.ए.,बी.एड.

Mr Mithyl Banymandhub,M.A.,B.Ed

(२) डॉ० विदुर दिलचन्द, पी.एच.डी.

Dr Vidoor Dilchand, Ph.D

(3) पंडिता लीलामणि करीमन, *एम.ए.,वाचस्पति*

Pta. Lilamunnee Kureeman, M.A.,Vachaspati

इस अंक में जितने लेख आये हैं, इनमें लेखकों के निजी विचार हैं। लेखों का उत्तरदायित्व लेखकों पर है, सम्पादक-मण्डल पर नहीं ।

The responsibility for any information and views mentioned in the articles rests entirely on the collaborators.

मुख्य सम्पादक

Printer : BAHADOOR PRINTING CO. LTD

Ave. St. Vincent de Paul, Les Pailles,

।।ओ३म्।।

दूरभाष : ०११-२६५२५६६३
ईमेल :-smdnyas99@gmail.com

श्रीमद्दयानन्द-वेदार्ष-महाविद्यालय-न्यास

११९, गौतमनगर, नई दिल्ली-११००४९

[संस्थापित श्रावण पूर्णिमा, संवत् १९९१ तदनुसार २४ अगस्त १९३४] [पंजीकरण संख्या १९५१ सन् १९९९]

क्रमाङ्क : **2K023-4179 (2023-2024)** दिनाङ्क : **04/07/2023**

।। यशोगृहित्वा पृथिवीमनुसंचरेम।।

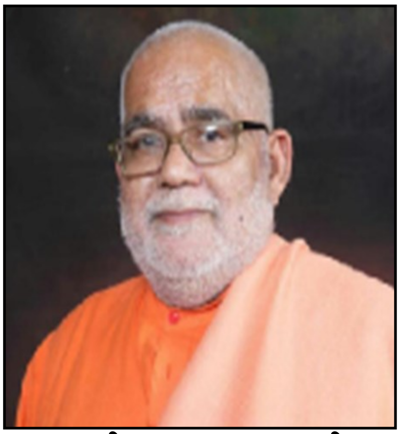

स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

लगभग आज से दो सौ वर्ष पहले अंग्रेजों की कुटिल चाल से भारत के कुछ हिस्सों से गरीब, असहाय और पीड़ित लोगों को समुद्री जहाजों में बैठा–बैठाकर सुदूर देशों में छोड़ा गया। परन्तु ये प्रवासी भारतीय अपने साथ अपनी संस्कृति के आधारभूत वेद, गीता, उपनिषद् एवं रामायण आदि ग्रन्थों को अपने साथ लेकर चले आए और इसके साथ-साथ यज्ञ-कुण्ड तथा पूजापाठ की सामग्री **एवं सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों को साथ में** लेकर अपने धर्म, संस्कृति एवं अपनी मान-मर्यादा का ध्यान रखते हुए अपनी पारम्परिक परम्पराओं को सदा आगे बढ़ाते रहे। उसी के परिणामस्वरूप आज जिन-जिन देशों में प्रवासी भारतीय रह रहे हैं, वहाँ–वहाँ भारतीय संस्कृति एवं भारतीय परम्पराएँ सुरक्षित हैं। इस बात का प्रमाण हिन्द महासागर में स्थित छोटा-सा देश मॉरीशस हम सब के लिए अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत कर रहा है।

इस छोटे से टापू में, जिसका कुल धरातल 2040 किलोमीटर के छोटे से क्षेत्र में बसा हुआ है, 450 आर्यसमाज आज वेद-प्रचार का कार्य सक्रिय रूप में कर रहे हैं। इन सबका श्रेय आर्यसभा मॉरीशस के समस्त अधिकारियों को जाता है। मेरी जानकारी के अनुसार मॉरीशस में आर्य समाज की स्थापना 1903 में उस समय के उत्साही, कर्मशील एवं ऋषिभक्त आर्यों ने की। आज उसी परम्परा को वर्तमान के अधिकारी अक्षुण्ण बनाए हुए हैं। यह परम्परा निरन्तर बनी रहे, ऐसी प्रभुदेव से प्रार्थना है। इस वर्ष दिनांक–**27 जुलाई से 30 जुलाई 2023 तक** अन्तर्राष्ट्रीय आर्य सम्मेलन किया जा रहा है, जिसका विषय है – **प्रवासी गिरमिटिया भारतीयों पर आर्यसमाज का प्रभाव।** इस विषय को लेकर सम्मेलन किया जा रहा है। इस सम्मेलन में विभिन्न देशों के आर्य प्रतिनिधि भाग ले रहे हैं, जैसे – दक्षिण, अफ्रीका, फिजी, त्रिनीडाड, हॉलैण्ड, सूरीनाम, यूगाण्डा, जन्जीवार आदि देशों से प्रतिनिधि भाग ले रहे हैं। मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि यह सम्मेलन कुछ नये मापदण्डों को लेकर निर्विघ्न सम्पन्न हो। धन्यवाद!

प्राचार्य

स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

प्राचार्य / Principal
श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय न्यास
119, गौतम नगर, नई दिल्ली-110049

ओं स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता सं गमेमहि ।।

ऋ० ५ / ५१ / १५

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि आर्य सभा मॉरीशस २७, २८, २९ और ३० जुलाई २०२३ के दौरान गिरमिटिया प्रवासी देशों में सांस्कृतिक विरासत की सुरक्षा विषय पर एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन कर रही है और साथ ही इस अवसर पर आर्योदय पत्रिका का विशेषांक भी प्रकाशित करने जा रही है।

उन आप्रवासी भारतीयों ने हर उस देश के विकास में पूरा योगदान किया, जहाँ पर भी उन्हें बसाया गया। उन देशों की प्रगति में गिरमिटिया मज़दूरों की अमिट छाप है। अति गौरव का विषय है कि उन मज़दूरों के वंसज आज कई देशों का प्रशासन संभाल रहे हैं, और राष्ट्रों का नेतृत्व कर रहे हैं।

यह सम्मेलन इन सब प्रश्नों पर चिंतन करने के लिए एक सुनहरा अवसर प्रदान करेगा। मुझे पूरा विश्वास है कि विभिन्न देशों के सम्माननीय प्रतिनिधि अपने अमूल्य विचारों से अनेक ज्वलंत प्रश्नों के समाधान में सहयोग प्रदान करेंगे।

आर्य सभा मॉरीशस का प्रधान

श्री राजेंद्र प्रसाद रामजी

A Duty of Memory

Hard for us it may be
To have a clear idea of times gone by
Fortunately the mind can project images
Of a way of life unknown
Thanks to pictures and sundry possessions
Gathered from the hands of relentless hours
To unfurl the history
Of these helpless, brave and resilient people
Who managed to survive the hell
Of cruel seas en route to a destination unknown

Across the shores of time
Long long back in Indian villages
Due to the greed of moneylenders
And circumstances beyond their control
That rendered living conditions dire
Anonymous men and women
Sometimes by children accompanied
Lured by dreams of better conditions
Decided to sever roots with their motherland
And graft their being to some alien branch
They courageously ignored prejudices
Left behind their past and their relatives
And took the plunge
Some ironically did so metaphorically
When their corpses were cast
Into the oceans where cruel sharks
Lay in wait
When they ultimately reached land
In new climes they were horrified
To discover the harsh reality
A far cry from their hopes of greener pastures
Notwithstanding the shattered dreams
With distorted names and new identities
They faced the situation with a courage
That defies understanding
They toiled tirelessly from dawn to dusk
Hard and harsh were life and the living conditions
They accepted hardships and humiliations meekly
Found solace in prayers
Time can bear witness to their trials and tribulations

Their touch rendered cultivation greener
Boulders gave way to fertile land
What followed was the miracle of productivity
From Mauritius to Guyana
From Suriname to Trinidad
We owe them a duty of memory
Over the countries we have made ours
Their souls continue to hover
And we bow in deep respect and reverence
To them for their legacy
They started life anew forsaking their past
We are at present reaping the outcome of their hardships
We are grateful.

Mithyl Banymandhub

From the Chief Editor's Desk

The Legacy of the Arya Samaj

In the context of the bicentenary celebrations of the birth anniversary of Maharshi Dayanand Saraswati, a series of activities is being organised by the Arya Sabha Mauritius.

The first activity, the Ashwamedha Yajna, started on 10th February, and lasted for sixty days.

The second event is a four-day international conference which will last from 27th to 31st July. The theme of this conference is *Girmitya Deshon mein Arya Samaj*.

Arya Sabha has sent invitations to delegates from the Fiji islands, Suriname, South Africa and some other countries across the Indian Diaspora. On this occasion we are publishing this special issue of '*Aryodaye'*.

Indian overseas have played and are playing an important role in these countries where their great grandparents have settled. They are in no small way contributing to the prosperity of these countries. They are occupying posts of responsibility and are to be seen in all sectors of life including business.

The Arya Sabha, too, have its share of contribution to this. The message of emancipation which the first missionaries preached caught the attention of the immigrants and changed their way of life gradually. They rejected superstitions and other irrational beliefs. The Arya Samaj gave them dignity and they became conscious of their roles in society. As the movement gained momentum the ideals of the Arya Sabha percolated to reach the descendants of the indentured labourers. It brought emancipation and new ideas.

Today the Arya Samaj is a dynamic and vibrant organisation in these countries. It is contributing to the socio-cultural and religious life of the descendants of the *Girmitiyas*. In a world which is becoming more and more Euro and American centred, the Arya Samaj has an important role to play to prevent the deculturization of people of Indian origin. We have travelled a long way and are looking at the future which is beckoning with confidence.

It goes to its credit that as from 1973 Arya Sabha Mauritius has organised several international conferences. Besides delegates settled across the 'Girmitya' Diaspora, some personalities from India will also be joining the participants in the various sessions of this conference. We wish a warm and hearty welcome to all of them.

We also express our gratitude to all those who, in one way or the other, have generously provided financial support to organise this conference. We would like to place on record our appreciation of the hard work they have put in.

Aims and objectives of this conference

This conference which we are organising has lofty ideals. The objectives are threefold. First, we aim at establishing close ties with all 'Girmitiya' countries where the Arya Samaj has a foothold. Second, it is our intention to carry out a survey to come to know how the Arya Samaj has been functioning across the 'Girmitiya' diaspora to improve the religious, cultural, social aspects of the life of Indians who migrated to these countries. Third, we wish to pay a glowing tribute to those missionaries who accepted to undergo untold sacrifices in the dissemination of Vedic Dharma in these countries.

Vedic Dharma and the Arya Samaj

Vedic Dharma is a way of life – the righteous way of living. It is based on universal truths which are opposed to superstitions and myths. It emphasises that the whole world is one family – *'Vasudhaiva Kutumbakam'*.

To achieve this, one has to shun selfishness, dishonesty, cruelty and hatred. Vedic Dharma can be the solution for such ills which continue to pervade society. The Vedas lay emphasis on discipline, austerity, prayers, rituals which help the human being to lead a life according to the precepts mentioned in our religious texts. In other words, a life which is well living.

On behalf of the Editorial Team and my own, I wish all participants from abroad a happy stay in our midst and fruitful deliberations. May noble thoughts come to us from all sides.

I would also like to express my heartfelt thanks and gratitude to all the people who have contributed their articles to this special issue.

Dr Oudaye Narain Gangoo

।।ओ३म्।।
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
WORLD COUNCIL OF ARYA SAMAJ

"दयानन्द भवन", 3/5, आसफ अली रोड
(रामलीला मैदान), नई दिल्ली-110002
"Dayanand Bhawan", 3/5, Asaf Ali Road
(Ramlila Ground), New Delhi-110002

आर्य समाज एवं गिरमिटिया मज़दूर

स्वामी आर्यवेश

गिरमिटिया मज़दूरों का मुद्दा लगभग 180 साल पुराना है, जो अंग्रेजों से हमें मिला है। वैसे तो बहुत से ज़ख्म अंग्रेजों ने हमें दिए हैं, लेकिन गिरमिटिया मजदूरों की कहानी को हम चाहकर भी नहीं भुला सकते।

आज से 180 वर्ष पूर्व हजारों गरीब भारतीय नागरिकों को जबरन दक्षिण अफ्रीका, मॉरीशस, सूरीनाम, त्रिनिनाद, गुयाना, फिजी सहित अन्य देशों में गिरमिटिया मज़दूर बनाकर ले जाया गया था। इन मज़दूरों को बंधुआ बनाकर रखा गया था । विविध अमानवीय यातनाएँ भी दी गईं । जिन–जिन देशों में गिरमिटिया समाज का बोलबाला है, वहाँ पर आर्य समाज की विचारधारा का भी प्रभाव बहुत अधिक है, क्योंकि उस समय हमारे जिन बुजुर्गों को भारत से ले जाया गया था, वे अपने साथ आर्य समाज की विचारधारा तथा पुस्तकों को लेकर गये थे और वहाँ जाकर भी अपनी विचारधारा को नहीं छोड़ा था। उन्होंने अपने स्वाध्याय एवं तर्क के आधार पर आर्य समाज तथा वैदिक विचारधारा से अन्य लोगों को भी जोड़ने का कार्य किया और कड़ी मेहनत के बल पर अपनी एक अलग पहचान बनाये हुए हैं। चूँकि आर्य समाज का विचार तर्क आधारित है और तर्क आधारित विचार कभी भी मरता नहीं है, इसलिए अपने साथ नये–नये लोगों को जोड़ता जाता है। अतः गिरमिटिया समाज ने अपने तर्क आधारित विचारों के बल पर बड़े–बड़े कार्य किये तथा उपर्युक्त देशों की प्रगति में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रहा है। साथ ही **वसुधैव कुटुम्कम्** की वैदिक भावना से सभी को प्रभावित कर रहा है। मॉरीशस के निर्माण का श्रेय भी गिरमिटिया समाज को ही दिया जा सकता है। इसीलिए प्रतिवर्ष 2 नवम्बर को मॉरीशस में भारतीय आगमन दिवस भी मनाया जाता है। 188 वर्ष पूर्व 2 नवंबर के दिन ही एटलस नाम का एक जहाज़ भारतीय मज़दूरों को लेकर मॉरीशस पहुँचा था। इस दिन भारत से लोगों को मॉरीशस मज़दूरी कराने लाया गया था, जिनमें से अधिकतर उत्तर प्रदेश और बिहार से थे। एटलस जहाज़ से आने वाले मज़दूरों को गिरमिटिया मज़दूर कहा जाता है, जिसका मतलब होता है कि अनुबन्ध के आधार पर लाये गये मज़दूर।

देखा जाये तो गिरमिटिया मज़दूरों की कहानी को आज तक इतना कहा–सुना नहीं गया है। ये वे भारतीय थे, जिन्हें मजबूरन अपनी मातृभूमि छोड़कर विदेश में जाकर कार्य करना पड़ा और अनेक यातनाओं का सामना करना पड़ा था। ब्रिटिश राज के दौरान भारत में उद्योग व्यापार समाप्त हो चुके थे। यदि हम औपनिवेशिक भारत के आर्थिक मॉडल को समझें तो इतिहास में हुई बहुत–सी घटनाएँ सरलता से समझ में आ जाएँगी। अंग्रेजों ने भारत में कच्चे माल की आपूर्ति पर एकाधिकार कर लिया था। ईस्ट इंडिया कंपनी के राज में अतिरिक्त कच्चे माल की आपूर्ति किसी और को नहीं की जा सकती थी। कच्चे माल की किल्लत ने भारत के हर छोटे-बड़े व्यापार को समाप्त कर दिया था। तेल से लेकर सुई तक, सबका निर्माण ब्रिटिश फैक्ट्रियों में होने लगा था।

1813 में ईस्ट इंडिया कंपनी का भारतीय व्यापार से एकाधिकार समाप्त कर दिया गया और भारत का **बाज़ार** इंग्लैंड की सभी कंपनियों के लिए खोल दिया गया। कम शब्दों में कहें तो भारत की लूट के लिए ब्रिटेन की हर कंपनी को लाइसेंस मिल गया था। 1818 में मराठा साम्राज्य के अंतिम भारतीय शासक को अंग्रेज़ों ने परास्त कर दिया। 1833 के चार्टर एक्ट में कंपनी के अंतिम व्यापारिक एकाधिकार भी खत्म कर दिए गए। दूसरी ओर दुनिया भर में फैले उपनिवेशों पर अब चाय, नील, कॉफ़ी, चावल और गन्ने के उत्पादन जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्र के लिए श्रमिकों की आवश्यकता थी। वहीं, भारत से कच्चे माल के साथ अब श्रम का निर्यात भी शुरू होने वाला था।

स्थानीय उद्योगों का व्यापार चौपट होने के बाद अब भारतीयों के पास केवल दो ही विकल्प थे। पहला था कि लोग खेती करें, लेकिन भारत में उद्योग बहुत विस्तृत था। सभी जातियों का अपना–अपना व्यापार था। वहीं, ब्रिटिश राज में व्यापार पूरी तरह ध्वस्त हो चुका था और अब इतने लोगों के लिए रोज़गार का आधार केवल कृषि बचा था। ऐसे में खेती पर अत्यधिक दबाव बना हुआ था। स्थिति भयावह होती जा रही थी।

ऐसी स्थिति में भारतीयों के पास कोई कार्य नहीं बचा था, तब अंग्रेजों ने भारतीयों को श्रमिक के रूप में विदेशों में कार्य करने का प्रस्ताव रखा और यहीं से अनुबन्ध श्रम या परमिट सिस्टम शुरू हुआ। इसी परमिट वाले श्रमिक को आम बोलचाल में 'परमिटिया' और फिर 'गिरमिटिया' कहा गया। जहाज़ से विदेश जाने पर इनको जहाज़िया नाम से भी पुकारा जाने लगा।

यहाँ यह भी उल्लेखीय है कि गुलामी और गिरमिटिया में अंतर होता है। उस समय पैसे चुकाने के बाद भी गुलाम मुक्त नहीं होता था। जबकि गिरमिटियाओं को समझौते के तहत **पाँच** साल बाद मुक्त होने की **आज़ादी** तो थी, परंतु **यहाँ** समस्या यह थी कि उनके पास भारत लौटने के लिए पैसे तक नहीं होते थे, जिस कारण उन्हें मजबूरन **वहाँ** रुकना पड़ता था।

गिरमिटिया मज़दूरों को तमाम तरीकों से प्रताड़ित किया जाता था। चाहे वह स्त्री हो या पुरुष गिरमिटियाओं को विवाह करने का अधिकार नहीं था। यदि वे विवाह कर भी लेते तो उन पर गुलामी वाले नियम लागू होते थे। गिरमिटियाओं की संतानें मालिकों की संपत्ति होती थीं। फिर मालिक चाहे तो उन्हें दूसरों को बेचें या फिर उनसे बड़ा होने पर काम कराएँ गिरमिटिया 12 से 18 घंटे तक रोजाना जी-तोड़ मेहनत करते थे। उनको केवल जीवित रहने के लिए भोजन, वस्त्र आदि दिये जाते थे। इस प्रकार की अमानवीय परिस्थितियों में काम करते–करते हर वर्ष सैकड़ों मज़दूरों की मृत्यु तक हो जाती थी।

इन सभी यातनाओं के बाद भी आज मॉरीशस में भारतीय मूल के लोगों का दबदबा है और यह सब सम्भव हुआ आर्य समाज की विचारधारा के कारण। मॉरीशस में बसे लोगों ने अपनी सभ्यता और संस्कृति को जीवित रखा और जी–तोड़ मेहनत करके मॉरीशस को सजाया और **सँवारा**, जिसकी बदौलत आज बड़े गर्व के साथ हम कह सकते हैं कि मॉरीशस में छोटा भारत बसता है। **यहाँ** की आबादी में लगभग 60 फीसदी से अधिक भारतीय हैं। इन भारतीय मूल के लोगों के पूर्वज **यहाँ** गिरमिटिया मज़दूर बनाकर लाये गये थे। जिनकी कई पीढ़ियाँ काम करते–करते बीत गई हैं। मॉरीशस उनकी मातृभूमि तो भले ही नहीं थी, परंतु यह उनकी कर्मभूमि अवश्य रही और इन्हीं मज़दूरों ने दृढ़ संकल्प और कड़ी मेहनत से मॉरीशस के निर्माण में अहम भूमिका निभाई। गिरमिटिया मज़दूरों ने मुक्त होने के बाद वतन वापस लौटने से अधिक बेहतर वहीं बस जाना उचित समझा और उसके बाद कुछ **वहाँ** पर स्वतंत्र मज़दूर बनकर और कुछ अपना व्यवसाय करके जीवनयापन करने लगे। इसके चलते **वहाँ** भारतीयों की संख्या बढ़ने लगी और वे मजबूत स्थिति में आ गए। प्रवासी भारतीयों की संख्या जब बढ़ने लगी और वे समृद्ध होने लगे तो उन उपनिवेशों में रहने वाले गोरे वहाँ पर

उनसे ईर्ष्या करने लगे और उनके विरोधी बन गये। वे मज़दूर बनाकर उन्हें यहाँ लाये और फिर उनकी सेवाओं का काफ़ी लाभ भी उठाया। बाद में सन् 1917 में गिरमिटिया प्रथा को गैरकानूनी भी घोषित कर दिया गया और गिरमिटिया स्वतंत्र हो गये।

गिरमिटिया मज़दूर जब मॉरीशस आये थे तो वे इस अनजान देश में अपने साथ अपनी भाषा, धर्म और संस्कृति भी लाये थे। उन्होंने इसे सहेजकर रखा और पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाते चले गये। बहुत से लोगों ने रामचरितमानस, भगवत गीता, सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों के माध्यम से अपनी सत्य सनातन वैदिक परम्परा की पहचान को जीवित रखा। यहाँ तक कि मॉरीशस की आज़ादी तक में भारतीयों का योगदान रहा। भारतीय मूल के सर शिवसागर रामगुलाम की अगुआई में ही मॉरीशस को 1968 में आज़ादी मिली थी। कुल मिलाकर देखा जाए तो मॉरीशस की आज़ादी से उसके विकास तक में भारतीयों ने अपना अमूल्य योगदान दिया है।

मॉरीशस की तरह अन्य देशों में भी गिरमिटया मज़दूरों ने संघर्ष एवं परिश्रम के बल पर न केवल अपने अस्तित्व को बनाकर रखा, बल्कि अपनी प्रभावशाली स्थिति बनाने में भी सफलता प्राप्त की। इसी के साथ–साथ आर्य समाज की विचारधारा को भी बढ़ाया। आज दक्षिण अफ्रीका, मॉरीशस, सूरीनाम, हालैण्ड, फिजी, गुयाना, त्रिनिदाद आदि देशों में आर्य समाज अत्यन्त सशक्त रूप में विद्यमान है। इन देशों में आर्य समाज की अनेक इकाइयाँ, शिक्षण संस्थाएँ तथा संगठन कार्य कर रहे हैं। आर्य समाज के प्रभाव के कारण विभिन्न महत्त्वपूर्ण विषयों पर उन–उन देशों की सरकारें आर्य समाज के नेताओं तथा पदाधिकारियों से सहयोग लेती हैं।

आज गिरमिटिया मज़दूरों के विषय पर आर्य सभा मॉरीशस के तत्वावधान में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के माध्यम से उनकी समस्याओं पर विचार–विमर्श किया जा रहा है। यह वर्तमान समय में अत्यन्त आवश्यक है और आर्य सभा मॉरीशस इस प्रशंसनीय कार्य के लिए बधाई की पात्र है। मैं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली की ओर से जहाँ आर्य सभा मॉरीशस को गिरमिटिया मज़दूरों से सम्बद्ध अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित करने के लिए हार्दिक शुभ कामना देता हूँ, वहीं इस सम्मेलन में विभिन्न देशों से पधारे सभी आर्य भाई–बहनों तथा प्रतिनिधियों को भी साधुवाद देता हूँ। आशा करता हूँ कि इस सम्मेलन से वैदिक विचारधारा को प्रचारित–प्रसारित करने में और अधिक सम्बल प्रदान होगा।

(स्वामी आर्यवेश)
मो.:–9013783101

दूरभाष : 011-23274771, 23260985, टेलीफैक्स : 011-23274216
ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in
वैबसाईट : www.vedicaryasamaj.com

आर्य समाज का दूसरा नियम

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

Arya Samaj in Guyana

Acharya Bramdeo Mokoonlall, USA

The teachings of Arya Samaj and its founder, Maharshi Dayanand Saraswati, reached the shores of Guyana in the early 1900's. Bhai Parmanand was the first Arya Samaj missionary. He gave a new momentum to the Samaj's outreach: the snowball effects among the Indian diaspora in Guyana with focus on education nurtured the physical, mental-moral-spiritual, and social uplift of Indian Indentured labourers and their descendants. Hindus, as a sizeable pie of the intelligentsia in Guyana emerged as a force to reckon with the homeland and thereafter in USA and Canada with onwards migration of descendants of the Girmitiya community.

Timeline :

1921 : First Arya Samaj was established in Guyana.

1929 : Arrival of Vedic missionary, Pandit Mehta Jaimini led to centralized organization of the Arya Samaj.

1936 : Arrival of Pandit Bhaskaranand who, during his ten year stay, helped in the setting up of several Samajs.

1937 : American Aryan League established as the parent body for all the Arya Samajs in Guyana.

1938 : Registration of American Aryan League under the Friendly Societies Ordinance with a building as the headquarters of the League.

1955 : Arrival of Pandit Usharbudh Arya, establishment of youth organizations as Arya Veer Dal and the Arya's Ashram at the Mahaicony River.

Feeling threatened by the new awareness amongst youth through the activities of the Arya Veer Dal, and the emergence of an intelligentsia among Hindus, the then Burnham Government asked Pandit Usharbudh Arya to leave Guyana.

1966 : May 26, Guyana became an independent state within the Commonwealth and a republic on February 23, 1970.

A common feature among the Girmitya diapora (Indian Indentured labourers) in several countries is that, they joined the Arya Samaj where they benefitted from the Sanatan Dharma (Vedic) education programme and became better persons, better in character, deed, and nature. The strong advocacy of the Arya Samaj against the birth-based caste system led to its eradication in Guyana. It is a paradigm shift from what is still very existent, plaguing the community of People of Indian Origin across the world.

Arya Samaj is still pursuing the Sanatan Dharma (Vedic) education programme leading its members and well-wishers to be noble in character, deed, and nature.

1968 : American Aryan League was renamed Guyana Arya Pratinidhi Sabha.

1969 : Guyana Arya Pratinidhi Sabha officially recognized by the government of the newly independent state of Guyana.

The setting up of the Arya Pracharak Mandal, council of priests ensured that the activities of the Samaj were conducted in accordance with the scriptures.

1973 : Revival of the youth organization under the name of Guyana Aryan Youth League. Youth assumed a significant role in the conduct of weekly satsangs.

The American Aryan League also ran a primary and a post-primary school.

1975 : Arya Samaj in Guyana had 40,000 members, with 35 Arya Samaj branches under the umbrella of the American Aryan League.

Members of the Arya Samaj advocated the end of Indian immigration and stood at the forefront of the struggle for independence of British Guyana. They vehemently opposed the caste system and advocated that Brahmins need be learned persons with Vedic education and impeccable character. A handful of lady priests, Pandita's officiating Yajnas and leading satsangs, broke the glass ceilings stirred the orthodoxy but galvanized the community.

In the 1970s, a majority of the People of Indian Origin (PIO) community in Guyana with the Arya Samaj movement at the forefront, supported Cheddi Jagan, leader of the People's Progressive Party (PPP) to counter Forbes Burnham and the People's National Congress (PNC) which was perceived as dictatorial and PIO community.

The Arya Samaj in Guyana was victim to split along political affiliations. In the late 1970s, the Berbice Central Arya Samaj called a unification meeting of the Arya Pratinidhi Sabha and the American Aryan League. The Guyana Central Arya Samaj, as umbrella organization, has since chosen to remain independent of political association.

Among the stalwarts, Pandit Ramlall became a cherished leader of the Arya Samaj in New York, USA. Acharya (Dr) Satish Prakash, though living in New York, is very active, holding annual camps and sermons in Guyana. He has added another milestone by establishing the Maharshi Dayanand Gurukul in Guyana.

Maharshi Dayanand Gurukul at Uitvlugt, West Coast Demerara Guyana

The Arya Samaj movement in Guyana, is not a movement for a specific race; once someone accepts the ten principles, he/she becomes a member of the Arya Samaj family. It has been, is and will always be a cradle of brilliant ideas, fearless people fighting for what is right. Since its establishment in Guyana, the Arya Samaj has produced leaders in all spheres of society; many are volunteers, serving the Arya Samajs in New York (USA), and Toronto, Calagary, Vancouver (Canada.)

It is amazing to see the Guyanese Girmitiya Diaspora performing Sandhya, Havan, reading Veda mantras and chanting bhajans from texts in Roman script although they have lost the Hindi language. More astonishing is the dexterity of the youth in reciting Sandhya and Havan mantras, singing bhajans, playing harmonium, tabla, dholak and other instruments, some multi-talented handling several instruments; in many cases, family members each handling an instrument perform as an orchestra during the satsangs.

There is a lot to learn from Guyana, especially the way the youth is very vibrant and forward stepping to be the torch bearers.

फीजी में हिंदी

फीजी में हिंदी का इतिहास उस समय से माना जाना चाहिए जब यहाँ पर प्रथम बार यात्री-वाहक-जहाज़ लियोनिवास 15 मई 1879 को आया। इस जहाज़ में 'पुरातत्व विभाग' के अनुसार 463 यात्री आए थे। बिहार, उत्तर प्रदेश से लोग थे, जिनमें सिक्ख, तमिल, मुसलमान, हिन्दू की संख्या अधिक थी।

यह था फीजी में भारतीय अनुबंधित मज़दूरों का आगमन। भोजपुरी, अवधी, बिहारी, तमिल आदि भाषाओं की खासी मिलावट थी। आपस में संपर्क-संप्रेषण हेतु फीजी में मानक हिंदी के समानान्तर फौजी हिंदी नामक अपभ्रंश बोली का निर्माण हुआ। कुछ मानक हिंदी के शब्द, कुछ अंग्रेज़ी शब्द, कुछ फीजी आम बोलचाल की बोली बनी। इसका मतलब यह कतई नहीं है कि मानक हिंदी का हनन हो गया हो। मानक हिंदी का प्रयोग औपचारिक समारोह जैसे शादी-ब्याह, जन्मोत्सव, 'गमी' आदि में अनिवार्य रूप से होता रहा है। फीजी में भारतीय मूल के फीजीयन हिंदी के माध्यम से अपनी सांस्कृतिक धरोहर को संभालकर रखने में काफ़ी हद तक सफल रहे हैं। फीजी में कई बुद्धिजीवियों द्वारा हिंदी का स्तर बनाए रखने की दिशा में कई ठोस कदम उठाए गए।

1924 में फीजी समाचार नामक साप्ताहिक समाचार पत्र का प्रकाशन आरम्भ हुआ जो 1964 तक चलता रहा। यह इंडियन पब्लिशिंग एण्ड प्रिंटिंग कम्पनी द्वारा प्रकाशित होता था और प्रथम संपादक बाबुराम सिंह थे। 1935 में 'फीजी टाइम्स' द्वारा 'शांतिदूत' साप्ताहिक का प्रकाशन आरम्भ हुआ।

'फीजी समाचार' एक प्रकार से आर्य समाज की विचारधारा को प्रतिपादित करना था और 'शांतिदूत' सनातन विचारों से ओतप्रोत था। बाद में 'जागृति' समाचारपत्र आया, 'जय फीजी' आया, 'फीजी संदेश' तथा 'सरताज' नामक समाचार पत्र आया, लेकिन किन्हीं कारणों से सब बंद हो गए, केवल शांतिदूत अभी तक पनप रहा है।

कई लेखकों ने फीजी में हिंदी के प्रति अथक प्रयास किया। ज्ञानी दास, तारा प्रेस सामाबुला से 'झंकार' नामक प्रकाशन करते थे। गीतों की पुस्तिका छापते थे, जो लोगों में काफ़ी प्रचलित थी। स्वर्गीय जोगिंद्र सिंह कंवल, पं. विवेकानन्द शर्मा, डा. सतेंद्र नन्दन जैसे कई लोगों ने हिंदी के प्रति बहुत काम किया।

फीजी ब्रोडकास्टिंग कमिशन द्वारा हिंदी रेडियो के माध्यम से हिंदी भाषा को बनाए रखने की पूरी कोशिश की गई। रेडियो फीजी के माध्यम से लोगों तक हिंदी के मानक रूप को दर्शाता रहा है। अम्बिका प्रसाद, दिवाकर प्रसाद, नवल किशोर, लेखराम वैश्नवी जैसे प्रबुद्ध उद्घोषकों ने काफ़ी हद तक इस प्रयास में सफलता पाई।

हिंदी की छवि बनाए रखने के लिए विद्वानों द्वारा स्कूलों में मानक हिंदी की शिक्षा पर ज़ोर दिया गया। फीजी शिक्षा मंत्रालय द्वारा शिक्षा विभाग के मार्फत स्कूलों में मानक हिंदी के उत्थान में बहुत ज़ोर दिया गया। समय-समय पर वाद-विवाद, भाषण तथा निबंध-लेखन-प्रतियोगिताओं का आयोजन होता रहा है। शिक्षा विभाग द्वारा 'नव ज्योति' नामक प्रपत्र प्रकाशित किया जाता है, जो शिक्षार्थियों के लिए बहुत लाभदायक है।

प्रवासी भारतीयों की संस्था 'ग्लोबल आरगानाइज़ेशन ऑफ इंडियन ऑरिजिन' द्वारा भी हिंदी के प्रति बहुत काम किया जा रहा है। 'हिंदी लेखक संघ' से स्थानीय लेखकों को उचित प्रोत्साहन मिलता रहा है। गाँवों में महिलाओं की मण्डली और रामायण मण्डलियों द्वारा भी हिंदी का प्रचार-प्रसार होता है। लेकिन रामायण के समापन के बाद हिंदी के प्रति कुछ खास नहीं होता।

फीजी में बोली जानेवाली हिंदी जो फीजी के नाम से पहचानी जाती है, उसमें एक अलग मिठास है। भले ही उसमें व्याकरण की कोई व्यवस्था नहीं है, फिर भी कर्णप्रिय है और सहज प्रवाह भी है।

भारतीय दूतावास द्वारा भारत जाकर हिंदी का गहन अध्ययन करने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान करने का भी प्रावधान है। फीजी में भी भारतीय दूतावास द्वारा फीजी के दोनों विश्वविद्यालयों को बहुत सहयोग मिलता रहता है।

केवल शिक्षा विभाग द्वारा ही हिंदी को आगे नहीं ले जाया जा सकता है। इसके लिए हिंदी प्रेमी समाज को सक्रिय होना पड़ेगा। आज तक के सफर में फीजी में हिंदी का पड़ाव अच्छा ही रहा है और आगे भी रहेगा। इस बात की हमें पूरी आशा है। जय फीजी, जय हिंदी।

श्री रमेश चंद
वरिष्ठ शिक्षा अधिकारी
शिक्षा, विरासत एवं कला मंत्रालय
पाठ्यक्रम विकास विभाग
सुवा, फीजी

(पंकज ग्यारहवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन विशेषांक 2018 - साभार)

The contribution of Arya Samaj to the uplift of indentured Labourers in Mauritius

Dr Vidoor Dilchand

Hiring labourers for the development of a country or the completion of a project is not new in the history of mankind. It can be traced back to the building of the pyramids in Egypt and the development of the Roman Empire. At the beginning, the labourers wilfully and knowingly sold their labour to their masters. The system worked well. But the greed of the recruiting agents led them to forcefully trap the stout natives of Africa and sell them to the wealthy masters thus making great profits in this trade. This system is known by slavery.

The slave trade was rendered easy as the Negroes were nomads. They had no permanent houses and according to some unconfirmed sources they had no family bond, hence, no developed culture. Culture, to me, is the collection of the best that has been said, made and done for the uplift of the human society.

The history of slaves in Mauritius is very heart touching. Fortunately, for the slaves, the slave trade ended in 1833.

Cheap Labour from the Subcontinent

Once slavery came to an end, the former slaves refused to work on the sugarcane plantations or for their former masters. As they were very strong physically and morally they decided to work as fishermen, stone masons and the like. They were the first entrepreneurs of Mauritius.

The landlords suffered a severe blow. They wanted to make of Mauritius the sugar granary of the British Empire. All of a sudden, their dream was shattered. They turned to India for cheap labour. They knew that Indians had a strong sense of duty and were very docile compared to the freedom loving, and, at times, rebellious slaves.

They lured the Indians and made them agree to come and work on the sugarcane fields of Mauritius. They signed an agreement for five years. As they could not pronounce the English word agreement properly they gave it a Hindi pronunciation 'Girmit' and they became to be known as *Girimitias*.

Landing of Immigrants

The ship *Sarah* arrived in Mauritius on 01 August 1834 with thirty-nine indentured labourers.

A misconception about the indentured labourers still persists …… and we are made to believe that they were very poor, illiterate and left their country to escape 'famine', that it, scarcity of food. This is not true. They were rich people and highly cultured. Culture implies literacy as well! A word of caution is needed here. Literacy does not mean knowledge of English only. One can be literate in a language other than English.

Those who believe that the indentured labourers were poor and illiterate may be advised to visit the museum of Indian immigrants at the archives of the Mahatma Gandhi Institute. There they will see the collection of Indian immigrants' photos laden with fine jewelry of their times known as "Hounsly" the neck jewelry, 'Jhoumka' – earings and 'jhanjepatly' worn in the ankle – to name but a few which easily amounts to one Kg of silver. The men had silver belts and silver chains for their pocket watches. This will enable them to draw their own conclusion.

The Indians brought with them books "Shigrabodh", "Ramayana" etc. in Kaithi scripts. The movement of Indentured labourers continued up to 1924.

The landlords had a hidden agenda. They wanted to deculturize the indentured labourers. Every time they brought in labourers, they brought only 30-40% of women. This caused a social imbalance. They thought that the indentured labourers would have recourse to mixed marriages and lose their socio-cultural identity. But this did not work.

The indentured labourers bravely faced all the harsh difficulties of their times as they believed in God and the law of Karma. As they had to work till very late in the afternoon. They had no time to prepare their next generation as they hoped and wished.

Manilall Doctor and the Arya Sabha

Fortunately for them, Barrister Gandhi paid a short visit to Mauritius in 1901. During his stay, he saw the social and cultural conditions of the indentured labourers. He advised them to consider Mauritius as their homeland, educate their children and take an active interest in politics.

When Mahatma Gandhi reached India, he sent Manilall Doctor to Mauritius to help improve the sad condition of the indentured labourers.

Manilall Doctor helped to establish the Arya Samaj in Mauritius. Slowly but surely, the movement gained momentum and nearly every village had its Arya Samaj where all the socio-cultural and educational activities were held.

The Arya Samajists were fearless people. Their motto was *"Jo bole so abhay Vedic dharma ki jai"*. They devoted heart and soul to the organization and uplift of the community.

The community thus had a forum from where all decisions were taken and messages were disseminated. This resulted in active participation of the community in politics.

The Arya Samaj produced learned and cultured generations through their Hindi schools. With time, the Arya Samaj introduced Academic and religious examinations from Indian Institutions. This paved the way for Mauritians to go for higher studies in India.

The Emancipation of Indentured Labourers

The next generation took active interest in politics. At the beginning, they supported the party which advocated their interest and when they became strong enough they created their own political party.

The volunteers of the Arya Samaj will be remembered for helping the Indian folk to write their names in Hindi as it was a prerequisite to qualify to become an elector. This volunteer action helped to increase the number of voters and with time they won nearly all elections.

The contribution of the Arya Samaj to the emancipation of the indentured labourers can easily be assessed by the fact that Dr. Sir Seewoosagar Ramgoolam always attended the *yajna* at the seat of Arya Sabha before going to attend the official flag hosting ceremony of the independence celebration at the Champ de Mars.

हिन्दी साहित्य के सृजन में सूरीनामी हिन्दुस्तानियों का योगदान

डॉ० मोहन कां० गौतम, लायडन, नीदरलैण्ड्स

लोक संस्कृति स्थिर नहीं रहती, उसका निरंतर सृजन होता रहता है। सूरीनाम के प्रवासी हिन्दुस्तानियों ने लोक संस्कृति का रख-रखाव ही नहीं किया, अपितु एक नया साहित्य रचा। आरम्भ में तो मौखिक पर बाद में लिखकर जनसमुदाय में इसका प्रचार और प्रसार भी हुआ। भारत से ही अरकटियों की चाल में फँस जाने पर भी डिपो और जहाजों में घर की याद में भावुक होकर ढोलक, मजीरे और दंडताल पर उन्हीं गीतों को गाते थे जो कभी वे अपने गाँवों की चौपाल पर तीज-त्यौहारों पर मित्रों के साथ एक मिलन की खुशी में गाया करते थे। गाँव के परिवेश से दूर होकर, वे उस माहौल को तो नहीं ला सकते थे पर उनकी स्मृतियों में उनकी जानी-पहचानी गाँव की गलियाँ, मंदिर, कुएँ, खेतों की पगडंडियाँ, पेड़, मित्र, भाई-बहन सभी निखर आते। यही तो उनका वर्चस्व था। अधिकांश प्रवासी अनपढ़ थे, पर उन्हें बहुत कुछ कण्ठस्थ था। जैसे हनुमान चालीसा, रामायण के दोहे और चौपाइयाँ, गीता के आदर्श, बिरहा, सोहर, भजन और कीर्तन। उनकी आशा यही थी कि सूरीनाम का पाँच वर्ष का बागानों का ठेका शीघ्र कट जाये और सूरीनाम की कमाई से भारतीय गाँव के ज़मींदार का कर्ज़ा, बहन का विवाह , छोटे भाइयों की पढ़ाई, घर की मरम्मत, माता-पिता की सेवा के लिए एक गाय खरीदकर जीवनपर्यन्त सुख, शान्ति और आराम से रह सकें। सूरीनाम के अमर सिंह रमन की कविता में यही बेचैनी झलकती है –

छोड़ अयली, हिन्दुस्तान बबुआ पेटवा के लिए
छोड़ी मैया, बप्पा, बंधु, सारी परिवारवा,
कि छूटल मिलन की आश.....

पर ऐसा नहीं हुआ। पैसा, ज़मीन और बच्चों के मोह में वे भारत नहीं लौट सके। 'भारत लौटना' एक मिथक बन गया। इसी स्वप्न ने भारतवासियों को ढाँढस और विश्वास दिया।

सूरीनाम में साहित्य सृजन किस-किसने किया, इसका ठीक पता नहीं है। आरम्भ में दो प्रवासी भारतीयों ने हिन्दी का काफ़ी प्रचार किया था। ये थे काका कालेकर और बाबू लक्ष्मण सिंह। दोनों 1888 में 'बंगाल दो' जहाज से सूरीनाम गये थे, लेकिन बाद में भारत लौट गये। आजकल जहाँ सूरीनामी हिन्दी परिषद् का कार्यालय है, वहीं पर बाबू लक्ष्मण सिंह रहते थे। इसके अध्यक्ष इंजीनियर हरि नारायण जानकी प्रसाद सिंह और अवकाश प्राप्त श्री हरिदेव साहतू ने ही परिषद् का निर्माण किया था। आज सूरीनामी हिन्दी परिषद् भारत और सूरीनामी के बीच एक सेतु बन गई है।

हम भारत के गुन गाई
जहाँ से अइले बाप और माई

आज सूरीनाम में हिन्दी का योग सर्वव्यापी है पर साथ ही सरनामी (भोजपुरी, अवधी और खड़ी बोली के मिश्रण की भाषा) घर-घर की बोल-चाल की भाषा बन गई है। दोनों का योग अस्मिता की सुरक्षा और रख-रखाव में धर्म की मान्यताओं और मूल्यों की खोज के साथ जीने का तरीका सिखलाना है। 'जात-पाँत' के भेदभाव और अस्पृश्यता से दूर आज यहाँ के हिन्दुस्तानी मिल-जुलकर रहते हैं।

भारत न लौट जाने की बेचैनी भी अब पीढ़ीयाँ पार कर चुकी है और जिन्हें जो भी कुछ आजा-आजी की कहानियाँ याद हैं, उनकी अब उमर भी ढल गई है। कभी मुंशी रहमान खान ने भी अपनी बेचैनी की पीड़ा प्रकट की थी –

"रोने के जी करले रहल,
घर की बहुत याद आवत रहा
और अब देखते ही देखते जवानी डबडबा गइल।"
फिर भी हिम्मत नहीं हारी और सूरीनाम में भारत बना लिया।
आये हम सब हिन्द से करन नौकरी हेत।
गिरमिट काटी कठिन से, फिर सरकारी खेत।
फिर सरकारी खेत कोई निजदेश चले गये,
कोई खरीदी भूमि कोई गाँवन में बस गये।
कहैं रहमान भाग्य के कारण पाय लक्ष्मी बहुत हर्षाये।
रह्यौ भाग्य विपरीत जिन्हों का कहैं।
कि यहाँ नाहक हम आये॥

मैंने काफ़ी वर्ष पहले एक कविता सूरीनाम में बड़े-बूढ़ों से बातें करके लिखी थी – उसका कुछ अंश ऐसा है –

जली रोटी की
मुस्कान का किस्सा
मेरे आजा-आजी के अनुभव
त्रासदी, कुंठा और शराफत
का बयान था
सुनकर मेरा आपा
मेरे आपे में न होता
पर सुनते ही चाह में
प्रतीक्षा ही किया करता
और इस प्रक्रिया में
कभी-कभी गाँवों की सजीव भीति
का दर्द उनकी आँखों से गुज़रता
आँसुओं की बूँदों में
उनकी सतरंगी कहानी
स्वतः ही साकार हो जाती ...

श्रीनिवासी की कविता-प्रेरणा के स्रोत मुंशी रहमान खान ही थे। इन्होंने कविता लिखना 1960 में आरम्भ किया था, पर आरम्भ तो पाँचवें दशक में हो गया था। एक कविता में उन्होंने सूरीनाम की प्रवृत्ति से मिली खुशी पर लिखा है –

यह वह दिन है
जो आज हमरे बीच
उतर आया है
तितली के चमकते नीले पँख
फड़फड़ाते उल्लहास भरे हैं
जिसके प्रकाश से
हिबसकस के फूलों में
लाल खुशी भर आई है
लेकिन क्षितिज को देखकर
मेरा दिल विस्मय से चौंत उठा है।

श्रीनिवासी (भारतीनस् हरिदत्त लक्ष्मन) ने प्रवासी हिन्दुस्तानियों की राजनीतिक स्थिति पर संकेत किया है। सदैव एक प्रश्न मस्तिष्क में मँडराता था कि सूरीनामी कौन हैं ? क्रियोल, चीनी, जापानी, भारतीय या मूल इण्डियन। श्रीनिवासी का मानना है कि जिसने सूरीनाम को अपना समझा, उसके विकास में सहयोग दिया, वही सूरीनामी है। उन्होंने सूरीनाम पर लिखा था :

सूरीनाम यह देश
मैंने चुना जिसमें बोया
जीवन अपना दिन और रात के
ज्वारभाटे में भक्षक समुद्री किनारा
जो निगलता और तोड़ता
निश्चित समय से दिल के कगार
किन्तु जीने की आशा में
निराशा की जड़ों के बीच
किनारे लगाता आने वाली पीढ़ियों को

फिर संस्कृति की सुरक्षा के लिए जब लोग 'इधर तू हाथ ला प्यारे, दिखाऊँ दिन में तारे' के चक्कर में एकता का विघटन करने लगे, तब श्री चन्द्रमोहन रणजीत सिंह ने एक कविता में सब कुछ कह दिया।

नर में नाग

सभ्य नहीं बन पाये नाग तुम सभ्य नहीं बन पाये।
उसको भी डँस लिया, जिसने तुझको दूध पिलाये। नाग ।।
अपने हीन कर्म से कभी नहीं पछताये।
जिसने रक्षा की तुम्हारी तेहि शिर बज्र गिराये। नाग।
नाता जोड़ के नाता तोड़ अपनी चाल दिखाये।
विषधर साँपों से मिलकर के कौम का खून कराये। नाग ।।
जो कुछ कहा किया ना उसको, लाज न मन में आये।
इसी से पापी तेरे मुख में, विधि दो जीभ बनाये। नाग ।।
जिस घर में तू चला प्यार से, उसमें आग लगाये।
शिर पर रखने वाले के शिर विष ज्वाला बरसाये ।।नाग ।।

हिन्दी और सरनामी को लेकर कभी ऐसा विदित हुआ कि हिन्दुस्तानी समाज में फिर से विघटन के बीज बोए जा रहे हैं। इसमें कुछ तो गलती राजनीतिज्ञ और पंडितों की थी, पर इसमें आग लगाने का काम विद्वानों न ही किया था। जिन्होंने यह कहना आरम्भ कर दिया कि मानक हिन्दी का तो आदर होता है और मातृभाषा को दूसरे स्तर पर रखकर हीनता के भाव से देखा जाता है। सरनामी को 'टूटल भाषा' कहकर मातृभाषा का अपमान तक कर डाला। फिर यह भी कहा कि सरनामी और हिन्दी दो भाषायें हैं जो एक-दूसरे से कोसों दूर हैं । सच में यह सब सरासर गलत है। भाषाओं की तुलना नहीं की जाती, अपितु यह देखा जाता है कि किस संदर्भ में भाषा का उचित प्रयोग हो। भाषा के व्याकरण की संरचना के साथ यही देखा जाता है कि शब्दों का प्रयोग और चयन कैसे हो। भाषाओं का अपनापन अनूठा होता है। किसी भाषा में की गई हंसी-मज़ाक का अनुवाद नहीं हो सकता है। भाषा की वेदना को लेकर सरनामी कवियों ने बहुत कुछ लिखा है, पर हिन्दी को संस्कृति को संवाहिका मानकर मान्यता भी दी है। श्री हरि साहूत जो हिन्दी और सरमानी के विख्यात कवि हैं, अपन द्वंद्व ठीक ही प्रकट करते हैं।

सरनामी

हम तोके का बोली
हम तोके का बोली
बोली बोली
भाषा बोली
अवधी कि भोजपुरी....
अंत में
अपन भाषा में एक बात बोली
तो हँसे हम्मे बहुत है प्यार
महतारी भाषा हमार, महतारी भाषा हमार
सरनामी हमार, सरनामी हमार

हिन्दी की प्रशंसा में सूरीनाम में काफी कवियों ने लिखा है, पर साथ ही उन्होंने मातृभाषा सरनामी पर भी।

चन्द्रमोहन रणजीत सिंह ने 'अपनी मातृभाषा' के नाम से 260 दोहों की कविता लिखी और आशय यही था कि निज भाषा को भुलाया नहीं जा सकता। अमर सिंह रमण न भी 'हिन्दी से हिन्दुस्तानी' कविता में यहाँ तक कहा कि हमारे संस्कार, हमारे रिश्ते, हमारा लिबास ही हमारे समाज के ताज हैं। आज नीदरलैण्डस् में भी नवयुवक कवियों में मुनेश्वर और चन्द्रदेव सुरजन नवोदित कवि हैं और भारतीय अस्मिता की सुरक्षा में हिन्दी और सरनामी के माध्यम से साहित्य विकास में रत हैं। इस सबको देखकर ऐसा लगता है कि संस्कृति की निरंतरता में प्रक्रिया की गति बढ़ रही है और साहित्य सृजन में नये पहलुओं को ध्यान में रखकर आजा-आजी के जन्मभूमि के साथ सूरीनाम भी जन्मभूमि बन गई है "मुल्क बदल गइल, वतन कईसे बदली"।

(साभार – प्रवासी संसार, विश्व हिन्दी सम्मेलन , सूरीनाम के अवसर पर प्रकाशित, पृष्ठ 6 और पृष्ठ 28) ◙

मॉरिशस : मेरा घर

- डॉ० कमल किशोर गोयनका

मॉरिशस मेरा घर ही है । मुझे वहाँ जो प्रेम और आदर मिला है, वह भारत में दुर्लभ है । मैं विगत 28 वर्षों से मॉरिशस से जुड़ा हूँ और जीवन पर्यन्त जुड़ा रहूँगा । मॉरिशस एक सुन्दर द्वीप है जैसे धरती का स्वर्ग हो । द्वीप के चारों और प्राकृतिक सुषमा मिलेगी, परन्तु इस सुषमा और समृद्धि के सृजन में भारतवंशी गिरमिटिया मजदूरों का खून और पसीना बहा है । गोरे मालिकों के कोडों के दर्द की मौन चीख ने इसे चमन में बदला है । मॉरिशस आज एक समृद्ध देश है, जिसकी आबादी कुल पन्द्रह लाख है। जिसमें 53 प्रतिशत हिन्दू हैं । मॉरिशस में धर्म, भाषा एवं संस्कृति के प्रति लोगों का भारत की तुलना में अधिक अपनत्व है । यहाँ हिन्दी भाषा स्कूलों में पढ़ायी जाती है और सभी धार्मिक कार्य हिन्दी एवं संस्कृत में होते हैं । आर्य समाज, सनातन धर्म, कबीर पंथी आदि अनेक धार्मिक सम्प्रदाय सद्भाव के साथ समाज में काम करते हैं, यद्यपि यहाँ भी धार्मिक एवं जातीय भेदभाव उभरने लगा है । भारत के प्रति यहाँ बड़ा अपनत्व है । भारत इनके लिये पूर्वजों की भूमि है, देव एवं धर्म-भूमि है । यहाँ का प्रत्येक हिन्दू एक बार अवश्य ही भारत आना चाहता है । मॉरिशस बहुधर्मी, बहुनस्ली एवं बहुभाषी देश है । परन्तु मुझे प्रायः परस्पर सद्भाव, सहिष्णुता एवं सामंजस्य का भाव मिला, यद्यपि अब एक-दूसरे के प्रति आशंका का भाव उत्पन्न होने लगा है । यहाँ का जीवन आसान है । भारत की तरह संघर्ष, आपाधापी, भाग-दौड़ यहाँ नहीं है । स्त्रियाँ दुकानों, दफ्तरों में काम करती मिलेंगी । स्त्रियों में निडरता और विश्वास दिखायी देता है । नागरिक प्रशासन में ईमानदारी, और कुशलता है । भारत के लोगों को भी एक बार अवश्य ही मॉरिशस जाना चाहिए ।

साभार – बुलन्दप्रभा, प्रेमचन्द विशेषज्ञ डॉ0 कमल किशोर गोयनका विशेषांक, पृष्ठ 111

साक्षात्कार

फ़ीजी में हुए बारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के सम्बन्ध में मैंने डॉ0 माधुरी रामधारी जी से कुछ प्रश्न किये। उन्होंने बड़े हर्षपूर्वक मेरे प्रश्नों के उत्तर दिये, जो पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत कर रहा हूँ । मैं डॉक्टर जी का आभारी हूँ ।

- विशाल भोला

- **डॉ माधुरी रामधारी जी, बारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन के उपलक्ष्य में आपने फ़ीजी की यात्रा की। कृपया इस यात्रा के सम्बन्ध में कुछ प्रकाश डालें।**

बारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन १५ से १७ फ़रवरी,२०२३ को फ़ीजी गणतन्त्र में आयोजित किया गया था। इस में सक्रिय भाग लेने के लिए मेरे साथ विश्व हिन्दी सचिवालय के दो अन्य कर्मचारी तथा शिक्षा, तृतीयक शिक्षा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मन्त्रालय के प्रतिनिधि, श्री निरंजन बीगन जी – हम चारों जने शनिवार १२ फ़रवरी २०२३ को शिवसागर रामगुलाम अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर पहुँचे। मॉरीशस से दुबई और सिंगापुर की लंबी हवाई यात्रा के पश्चात् हम रविवार १३ फ़रवरी २०२३ को फ़ीजी के देवनागरी में नान्दी हवाई अड्डे पर पहुँचे और वहाँ के

‘स्काईलोज’ तान्वा हॉटल में ठहरे। अगले दिन हम सम्मेलन संबंधी कार्यों में रत हो गये। सम्मेलन के दो दिन बाद हमने वापसी यात्रा की। इस बार ऑस्ट्रेलिया के सिडने एअर पोर्ट से होते हुए मॉरीशस की यात्रा सम्पन्न हुई।

- **फ़ीजी की धरती पर पदार्पण करने से पूर्व क्या आप को इस देश के बारे में कुछ जानकारी थी ?**

जी हाँ। फ़ीजी के हिन्दी कार्य-कर्ताओं के साथ मेरा निरंतर फ़ोन पर संवाद होता रहा। ईमेल के माध्यम से भी फ़ीजी के इतिहास, सामाजिक-सांस्कृतिक एवं भाषिक स्थितियों के संबंध में जानकारियाँ प्राप्त होती रहीं। सम्मेलन के आयोजन के विविध पहलुओं का परिचय भी प्राप्त होता रहा। इसके अतिरिक्त मैंने इंटरनेट के माध्यम से फ़ीजी की भौगोलिक एवं राजनीतिक स्थितियों का सामान्य ज्ञान अर्जित कर लिया था।

- **कृपया फ़ीजी देश का कुछ परिचय दीजिए।**

फ़ीजी दक्षिण प्रशांत महासागर में स्थित एक द्वीप-समूह है। इस द्वीप समूह के ११० टापुओं पर लोग स्थायी रूप से बसते हैं। इस द्वीप बहुल सागर में ५०० से अधिक अन्य लघु द्वीप हैं, जिनका कुल क्षेत्रफल ७१०० वर्गमील है। लगभग १५० मिलियन वर्ष पूर्व इन टापुओं का निर्माण ज्वालामुखियों के विस्फोट से हुआ था। इनमें दो बड़े द्वीप –‘विटी लेवु’ और ‘वानुआलेवु’ हैं, जिनकी कुल जनसंख्या नौ लाख चौबीस हज़ार छः सौ दस है। तीन चौथाई फ़ीजी निवासी –‘विटी लेवु’ के सागरीय तटों पर निवास करते हैं। ‘सुवा’ उसकी राजधानी है। नादी शहर पर्यटन उद्योग का केन्द्र है। अन्य प्रमुख नगर सुवा और लोतोका है। फ़ीजी में अनेक बार बलात् राज्य-परिवर्तन हुए। वहाँ के मूल निवासियों में कई बार गृहयुद्ध भी हुए। सन् १८७५ के जून मास में सर आर्थर हामिल्टन गोर्दन फ़ीजी के राज्यपाल नियुक्त हुए। दास-प्रथा-उन्मूलन के पश्चात् वर्ष १८७५ से गन्ने के खेतों में काम करने के लिए, उन्होंने भारत से शर्तबन्द श्रमिकों का आयात प्रारम्भ किया। १४ मई १८७९ को ४६३ भारतीयों ने फ़ीजी की धरा पर पदार्पण किया। १९१६ तक मज़दूर फ़ीजी पहुँचते रहे। अपरिचित देश में उन श्रमिकों की दशा वैसी ही रही, जैसे मॉरीशस में लाये गए श्रमिकों की। वे अपने देश से अपनी भाषा और धर्म-संस्कृति को साथ ले गए थे। अनेक बार के राजनीतिक उतार-चढ़ाव के पश्चात् १० अक्तूबर, १९७० को फ़ीजी ब्रिटिश शासन से मुक्त हुआ और ७ अक्तूबर सन् १९८७ को गणतन्त्र बना।

- **कृपया बारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन की कुछ गतिविधियों पर प्रकाश डालिए।**

डेमेरो, फ़ीजी के शेरातन हॉटल में आयोजित तृदिवसीय बारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्घाटन १५ फ़रवरी को हुआ और उसका समापन १७ को हुआ, जिसमें देश-विदेश के हिन्दी कार्यकर्ताओं की प्रतिभागिता रही। उद्घाटन-सत्र में फ़ीजी गणराज्य के राष्ट्रपति महामहिम श्री रातु विलियम मायवालिली काटोनीवेरे जी एवं भारत सरकार के विदेश मंत्री माननीय डॉ० एस. जयशंकर जी के कर-कमलों से विश्व हिंदी सचिवालय द्वारा प्रकाशित 'विश्व हिंदी साहित्य' के विशेषांक का लोकार्पण हुआ। प्रथम दिवस के एक समानान्तर सत्र में हिंदी संगठन, मॉरीशस द्वारा प्रकाशित स्मारिका का भी लोकार्पण हुआ। सायंकाल में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। फ़ीजी गणराज्य के प्रधान मंत्री माननीय श्री सितीवेनी राबुका जी एवं भारत सरकार के विदेश मंत्री माननीय डॉ0 एस. जयशंकर जी की गौरवमय उपस्थिति में प्रीतिभोज हुआ। इस दौरान सम्मेलन के अनेक देशों के प्रतिभागियों के साथ प्रेम-मिलन हुआ।

द्वितीय दिवस राजभाषा विभाग का एक समानान्तर सत्र लगा, जिसमें विश्व हिंदी सचिवालय की उपमहासचिव डॉ० माधुरी रामधारी की सह-अध्यक्षता में — “देश-विदेश में हिंदी शिक्षण : चुनौतियाँ और समाधान”

— विषय पर सूचनापरक एवं ज्ञानवर्धक आलेख प्रस्तुत किए गए। द्वितीय दिवस की शाम को ही हमें फ़ीजी के नादी शहर में स्थित विवेकानंद कॉलिज के प्रधानाचार्य और छात्रों से भेंट करने का अवसर प्राप्त हुआ।

तृतीय दिवस में विश्व भर के समर्पित हिन्दी कार्यकर्ताओं को विश्व हिंदी सम्मान से विभूषित किया गया। इस अवसर पर हमने फ़ीजी के उपप्रधान मंत्री माननीय श्री बीमन प्रसाद जी से भेंट की। फ़ीजी विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग की अध्यक्षा श्रीमती मनीषा रामरखा और विश्वविद्यालय की छात्राओं से भेंट हुई। सम्मेलन में भारत के विदेश राज्य मंत्री द्वारा मॉरीशसीय साहित्यकारों की पुस्तकों का लोकार्पण किया। यह अत्यन्त सुखद है कि तृदिवसीय सम्मेलन के अन्तर्गत 'राजभाषा भारती' और 'विश्वरंग' पत्रिकाओं का भी विमोचन हुआ। तृतीय दिवस के दोपहर में हमने फ़ीजी के 'नेटीव विलेज' का भी भ्रमण किया।

- **सम्मेलन के पश्चात् क्या आपने फ़ीजी के कुछ स्थानों के दर्शन किये ?**

मेरी इच्छा थी कि फ़ीजी के प्रमुख स्थानों के दर्शन करूँ। परंतु सम्मेलन के पश्चात् दो दिनों तक इतनी मूसलाधार वर्षा हुई कि होटल से बाहर निकलना सम्भव न हो सका। बड़ी कठिनाई से यूनिवर्सिटी ऑफ फ़ीजी गई, जहाँ विद्यार्थी डिप्लोमा बी.ए. और एम.ए. के स्तर पर हिन्दी पढ़ते हैं। हिन्दी विभागाध्यक्ष श्रीमती मनीषा रामरखा के सहयोग से हिन्दी विभाग को देख सकी।

- **आप आर्य समाज से जुड़ी हुई हैं। सुना है कि फ़ीजी में भी कई आर्य समाज हैं। क्या आप को फ़ीजी के किसी आर्य समाज में जाने का अवसर मिला ?**

जी हाँ, एक रविवार की सुबह को लोतोका आर्य समाज के सत्संग में उपस्थित हुई। मॉरीशसवासी श्री निरंजन बीगन जी द्वारा उस साप्ताहिक सत्संग में यज्ञ हुआ। कोई पचास नर-नारी सत्संग में उपस्थित थे। यज्ञ के पश्चात् प्रवचन हुआ। उस भक्तिमय वातावरण में बड़े आनन्द की अनुभूति हुई।

- **बारहवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन संबंधी कोई संस्मरण बताइये।**

इस सम्मेलन के संस्मरण संबंधी कई लेख लिखे जा सकते हैं। भारत और कई अन्य देशों के हिन्दी विद्वानों के सान्निध्य से मुझे बहुत प्रेरणा मिली। मैं सोचती हूँ कि इस विषय पर भविष्य में एक संस्मरणात्मक लेख लिखने की आवश्यकता है।

डॉक्टर, माधुरी जी इस वार्तालाप के लिए बहुत धन्यवाद। ◘

THE "GREAT EXPERIMENT"

No self is of itself alone. It has a long chain of intellectual ancestors.
The "I" is chained to ancestry by many factors ... This is not mere allegory, but an eternal memory.

Erwin Schrodinger

Year 1834, September 4th

Motilal gazed at the starless night as the voices of his daughter and wife echoed inside his head, paralyzing his brain, threatening to awaken the tide of emotions, which had been repressed by the six month long journey on this ship. Motilal still remembered the look on his daughter's face upon the first sight of this humongous ship. It was an expression of pride indwelling her awe and admiration, a feeling that was foreign to them. Six months later, while sitting cross-legged with an empty stomach that had not been fed for two days, Motilal nearly regretted his impulsive decision of travelling to an unknown island. It was certainly not the first time he had not eaten in days. Starvation was a hallmark of poverty, which plagued generations of his family. However, the idea of contractual work on an island which guaranteed a generous source of income had rekindled the hope of a secure prosperous future for his children. He had not expected to face starvation so soon.

At the age of twenty- five, Motilal was already a father of his five-year-old daughter. Their lives had been gnawed by poverty, in addition to which, the news of his wife's pregnancy had struck them like a bolt of lightning. Motilal knew the fate of his unborn child. He did not want another child of his to be deprived of his basic needs. A few days later, talks of a contractual work started spreading around the village. It was rumored that it paid handsomely. Furthermore, the island was considered to be mystic. It was believed that at one time, pirates inhabited the island, as a result of which, many of their prized treasures were accidentally discovered by labourers, making them rich overnight. The rags to riches story had worked like a magical potion on Motilal. Entrusting his pregnant wife and daughter to his elder brother's family, he embarked on board the "Atlas", with a promise to return as a rich man.

Today, the thought of returning to his people drowned his eyes with tears. He shifted his gaze from the pitch dark sky towards a corpse lying next to him. The corpse belonged to a twenty-seven year old emaciated looking man, named Bhola. The latter was the closest friend Motilal had made on this ship. They had spent days brewing dreams of becoming rich Sahebs after accidently discovering gold and pearls while working on the island. Sometimes they wondered that they might not be fortunate enough to be destined of such riches, but they were confident that their children would eat heartily, go to school and get a respectable job with a generous pay.

As the dead body of his dear friend lay next to him, he wondered if Bhola would meet the same fate as the other corpses on the ship. When for the first time a labourer had died on the ship, his body was tossed into the sea within minutes of his death. They were later explained that the death was caused by some contagious disease that could spread to others, hence the disposal of the body was imperative. However, as more people died, their bodies were flung into the ocean thoughtlessly. Four hours passed since Bhola had breathed his last, yet Motilal clung to the hands of his deceased friend, in an attempt to convince others that Bhola was merely sleeping. Since Bhola had been severely diseased for the last week and none of the Sahebs had cared enough to check on him, the excuse provided by Motilal seemed plausible. As the warmth gradually disappeared from the corpse and *rigor mortis* began to set in, Motilal knew that it was time to part ways. He began reciting some verses from the *Ramayana*, which belonged to Bhola. One hour into the recitation, a Saheb walked towards Motilal, curious at the sight of Motilal reading the *Ramayana*. He instantly knew that Bhola had passed away and his friend was simply buying some time to perform some rituals.

Motilal had yet to finish his verse when he was blinded by the kick of a heavy boot. He was thrown to the side and the *Ramayana* sacred text was out of his grasp. The Saheb muttered some words under his breath and called out for some of his mates. The corpse was held by two people and was cast into the darkness of the night. Motilal ran towards the deck, exercising his infinitesimal chance to catch a last glimpse of his friend, but he was greeted by nothing but the cold, fathomless abyss of darkness.

"Free Indian workers under engagement were employed as from 1825, but the beginning of the **great Experiment** started with the recruitment of 75 labourers from Calcutta and Bombay by Arbuthnot in 1834. Indian workers were perceived as being quiet, docile and industrious by colonists and soon other planters followed the example of Arbuthnot. The recruitment and arrival were done by private parties. However, the Anti - Slavery Society brought indentured immigration to the attention of the British Parliament and this culminated in the suspension of emigration from British presidencies in 1838."

(Extract from an overview of history of Indenture)

Dr. Poornasha Mohabeer

आर्य समाज के मूर्धन्य संन्यासी: आचार्य स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती

आचार्य जितेन्द्र पुरुषार्थी

आज से लगभग १४८ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जिस आर्य समाज रूप एक नवीन आन्दोलन का शुभारम्भ किया था,वह अनेकविध अपने कर्तव्य कार्यों को पूर्ण करता हुआ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सुप्रसिद्ध है। ऋषि दयानन्द ने जिस वैदिक परम्परा को परिमार्जित कर आर्ष वैदिक परम्परा के रूप में हमारे सामने उपस्थित किया था, उस आर्ष परम्परा को मूर्त स्वरूप स्वामी श्रद्धानन्द ने परिणत किया,जो कि गुरुकुल कांगड़ी के रूप में लोकविश्रुत है। इसी दीपक ने अनेक दीपकों को प्रज्वलित किया। इसी एक स्फुरित चिगांरी ने अनेकों ऋषि-भक्तों को जन्म दिया, इसी अजस्र स्रोत से ज्ञानगंगा प्रव. ाहित हो गयी और इसी ज्ञानगंगा से प्रभावित होकर ऋषि-भक्ति से ज्ञान से प्रपूरित हो कर आचार्य स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती जी ने भी अपना सर्वस्व त्यागकर इस अविरल बहती आर्ष धारा को और अधिक गति प्रदान की।

स्वामी जी का जन्म हरियाणा प्रान्त के अर्न्तगत भिवानी ज़िले के गौरीपुर नामक ग्राम में ७ जुलाई १९४७ ई. को सौभाग्यशाली माता श्रीमती समाकौर ने दिया। आपके पिता जी नाम श्री तोखराम आर्य था। जन्म के पश्चात् आपका नाम हरिदेव रखा गया। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा ग्राम में हुई तथा १५ जून सन् १९६१ को १४ चौदह वर्ष की आयु में आप स्वामी ओमानन्द सरस्वती पूर्व नाम आचार्य भगवान देव जी के चरणों में गुरुकुल झज्जर हरियाणा में आ गये। १९६१ से लेकर १९६७ तक आपने संस्कृत व्याकरण, वेद, दर्शन, उपनिषद् एवं संस्कृत साहित्य में उपाध्याय, विद्यावारिधि (शास्त्री के समकक्ष) व्याकरणाचार्य (एम.ए. के समकक्ष) आदि परीक्षाएँ प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करके आपने आचार्य की उपाधि प्राप्त कर अगले तीन वर्ष गुरुकुल में ही आध्यापन-कार्य किया। १९७१ से १९७७ तक आपने आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के अर्न्तगत देश के विभिन्न प्रान्तों में आर्य समाज एवं वेद प्रचार कार्य बड़ी ही कुशलतापूर्वक कर अनेक लोगों को वैदिक धर्म का अनुयायी बनाया। सन् १९७७ में आपने गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार से वेद विषय में ही एम.ए प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर जनवरी १९७८ तक गुरुकुल कांगड़ी में वेद विषय के प्राध्यापक के रूप में कार्य किया। अन्तःकरण में स्थित ऋषि-भक्ति तथा आर्ष परम्परा के ज्ञान से इन सांसारिक बन्धनों से मुक्त होने की प्रबल वैराग्यकल्प की प्रेरणा से प्रेरित होकर आपने प्राध्यापक का पद त्याग कर वैदिक साधना आश्रम गुरुकुल यमुना नगर में जनवरी १९७८ से ही १९ अप्रैल १९७९ तक आचार्य-पद को सुशोभित किया। तत्पश्चात् १७ अप्रैल १९७९ से लेकर वर्तमान तक 'श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय' गुरुकुल गौतम नगर, नई दिल्ली – ११००४९ को अपना कार्य-क्षेत्र बनाया, जो उस समय लगभग समाप्त हो चुका था, परन्तु आपने अपनी संकल्प-शक्ति दृढ़ धैर्य से जो महान् कार्य किया, उसे आज कौन नहीं जानता। इस कार्य को यहाँ तक लाने में आपको अनेक असह्य कष्टों को सहन करना पड़ा। अनेक बार असह्य रोगों की पीड़ा सहनी पड़ी, परन्तु आर्ष परम्परा और ऋषि-भक्ति के सामने सांसारिक रोग और कष्ट बौने साबित हुए और आप आज तक भी निरन्तर गुरुकुल के कार्यों में संलग्न हैं। जबसे आपने इस गुरुकुल के आचार्य पद को सुशोभित किया, तभी से गुरुकुल ने अवर्णनीय उन्नति एवं दुर्लभ उपलब्धियों को प्राप्त कर समाज को चमत्कृत किया है। आपके इस अथक प्रयास से जहाँ गुरुकुल गौतम नगर को उन्नति के शिखर पर पहुँचाया, वहीं देश के अन्य राज्यों में भी अनेक गुरुकुलों की स्थापना हुई। सन् १९९४ में स्वामी शान्तानन्द सरस्वती द्वारा प्रदत्त एक एकड़ भूमि में 'श्रीमद् दयानन्द वेदार्ष महाविद्यालय', यमुनातट मंझावली ज़िला फरीदाबाद हरियाणा की स्थापना कर उस क्षेत्र के ज्ञान के प्यासे विद्यार्थियों की प्यास को आज तक अपने ज्ञान से शान्त कर रहे हैं। दान से प्राप्त भूमि गुरुकुल, गौशाला एवं अतिथिशाला के लिए पर्याप्त नहीं थी, इसलिए आपने गुरुकुल के साथ की भूमि खरीदकर विशाल छात्रावास, गौशाला अतिथि, शाला और साधना के लिए सब सुविधा से सुसज्जित अनेक कक्षों का निर्माण कर दिया, जिससे जो साधना करने के इच्छुक

जन आराम से रहकर अपनी साधना कर सकें। वर्तमान मे गुरुकुल मंझावली के पास एक विशाल भू खण्ड पर २०० छात्रों के रहने के लिए छात्रावास, अतिथिशाला एवं गौ पालन हेतु भवन बना है। जहाँ दूर-दूर से विद्यार्थी आकर गुरुकुल गौतम नगर के सुयोग्य स्नातक एवं आचार्य स्वामी प्रणवानन्द के शिष्य आचार्य जयकुमार एवं श्री सुमित कुमार शास्त्री, ब्रह्मचारी आशीष कुमार शास्त्री के सान्निध्य में अपनी ज्ञान की प्यास को शान्त कर रहे हैं । गौशाला से प्राप्त दूध छात्रों के प्रातराशः एवं अतिथियों के लिए प्रयोग किया जाता है। आपके पवित्र कदम केवल दिल्ली एवं हरियाणा तक ही सीमित नहीं रहे, अपितु आपने देव भूमि उत्तरा खण्ड की पवित्र भूमि को अपना कर्म-क्षेत्र बनाकर वहाँ भी वेद-ध्वनि गुँजाने के लिए स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी के सुपुत्र श्री कान्त वर्मा जी द्वारा प्रदत्त भूमि पर सन् २००० में एक शाखा श्रीमद्दयानन्द आर्ष ज्योतिर्मठ गुरुकुल, दूनवाटिका–२ पौन्धा देहरादून में उत्तराखण्ड के ब्रह्मचारियों को वेद-ज्ञान से आप्लावित करने के लिए गुरुकुल को स्थापित कर गुरुकुल के कर्मठ स्नातक आचार्य धनंजय शास्त्री एवं आचार्य चन्द्र भूषण शास्त्री को भार सौंपा। आचार्य यज्ञवीर शास्त्री, श्री शिवदेव शास्त्री, श्री शिव कुमार शास्त्री अनेक विद्वान् अपनी योग्यता के अनुसार गुरुकुल में समर्पित भाव से सहयोग प्रदान कर रहे हैं । आपने गुरुकुल के साथ गौशाला एवं आर्ष पुस्तकालय की स्थापना की। आज गुरुकुल में एक विशाल छात्रावास के साथ ब्रह्मचारियों के लिए दूध की आवश्यकता पूरा करने के लिए आपने गौशाला का निर्माण भी कर इस कमी को भी पूरा कर दिया, जिससे छात्रों को इसकी कमी का अनुभव न हो। दिल्ली, हरियाणा और उत्तराखण्ड के पश्चात् आपके कदम उत्कल (उड़ीसा) प्रान्त की ओर अग्रसर हो गये और आपने स्वामी ज्ञानानन्द सरस्वती द्वारा प्रदत्त एक विशाल भूमि पर वेद एवं आर्य समाज के प्रचार के लिए सन् २००० में महर्षि दयानन्द गुरुकुल योगाश्रम, नरसिंहनाथ, ज़िला बरगढ़ उडीसा का निर्माण किया। गुरुकुल गौतम नगर के स्नातक नरदेव यजुर्वेदी, जो वर्तमान में हॉलैण्ड में रहकर आर्य समाज व वेद-प्रचार का कार्य करते हैं इस गुरुकुल का भी कार्य सम्भाल रहे हैं । गुरुकुल गौतम नगर के ही स्नातक आचार्य बुद्ध देव शास्त्री जो उत्त्कल प्रान्त के ही निवासी थे, उनको इस कार्य के लिए आपने प्रेरित किया। आचार्य बुद्धदेव शास्त्री ने अपना दायित्व निभाते हुए पूरे क्षेत्र के आर्य समाज व वेद के प्रति लोगों को जागरुक किया।

१३ अप्रैल २००६ को स्वामी विचार मुनि द्वारा प्रदत्त उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ ज़िले, के अन्तर्गत खैर तहसील के गोमत नामक ग्राम में 'श्री कृष्ण आर्ष गुरुकुल देवालय गोतम', अलीगढ़ की स्थापना कर इस क्षेत्र के ब्रह्मचारियों के लिए आपने वेद एवं आर्य समाज के दरवाज़े खोल दिये, जिससे क्षेत्र के बच्चे आर्य समाज व वेद-ज्ञान प्राप्त कर अपना जीवन सार्थक कर सकें। गुरुकुल के साथ ही गौशाला का भी निर्माण कर ब्रह्मचारियों के लिए दूध की कमी को भी पूरा कर दिया।

उत्तर प्रदेश के पश्चात् आपने एक बार फिर उत्त्कल प्रान्त की ओर कदम बढ़ाते हुए सन् २००८ में 'आर्ष कन्या गुरुकुल', देव नगर, ज़िला बरगढ़ उड़ीसा की स्थापना कर महर्षि दयानन्द सरस्वती के उद्घोष को सार्थक बनाने के लिए कन्या गुरुकुल की स्थापना कर कन्याओं के लिए वेद की शिक्षा का द्वार खोल आचार्या शारदा शास्त्री, जो स्वयं कन्या गुरुकुल हाथरस से शिक्षा प्राप्त कर चुकी है और उड़ीसा प्रान्त की है, को इस दायित्व को निभाने की ज़िम्मेदारी दी, जो बड़ी ही कुशलतापूर्वक इस कार्य को कर रही है। गुरुकुल का प्रबन्ध-कार्य करने के लिए इनके पति आचार्य अनन्त शास्त्री, स्नातक गुरुकुल प्रभात आश्रम मेरठ को नियुक्त किया, जो पूरी निष्ठा के साथ कार्य कर रहे हैं।

दिल्ली, हरियाणा, उत्तराखण्ड और उत्तरप्रदेश के पश्चात् भारत के दक्षिण में भी वेद ज्ञान एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज का विस्तार करने के उद्देश्य से एक गुरुकुल सुदूर केरल प्रान्त में पण्डित लेखराम आर्ष गुरुकुल, वेल्लीनेझी, ज़िला पालक्काड़ केरल सन् २०१३ में स्थापित कर गुरुकुल गौतम नगर के ही स्नातक आचार्य अयन कुमार शास्त्री को वहाँ की ज़िम्मेदारी देकर भेजा, जो वर्तमान में अपना दायित्व पूरा कर रहे हैं।

भारत के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्तों में गुरुकुल स्थापित करने का आपका यह सिलसिला यहीं नहीं रुका, अपितु निजाम के कहे जाने वाले हैदराबाद तेलंगाना में भी ०३ अप्रैल सन् २०२२ को दयानन्द भवन समिति द्वारा प्रदत्त एक विशाल भवन में 'श्रीमद् दयानन्द वेद विद्यालय' की स्थापना कर आचार्य धनंजय शास्त्री के सहयोग से वहाँ गुरुकुल पौन्धा के स्नातक श्री वेदमित्र शास्त्री को इस दायित्व को निभाने के प्रेरित किया। हैदराबाद के ही अनेक आर्य जन इस कार्य में गुरुकुल को पूरा सहयोग कर रहे हैं ।

आप केवल गुरुकुल के माध्यम से ही कार्य नहीं कर रहे हैं, अपितु समाजों के कार्यक्रमों एवं सम्मेलनों में जाकर भी ऋषि का सन्देश अपने प्रवचनों से भी आर्य जनों को जागरुक कर रहें। जब से गुरुकुल गौतम नगर आपने सम्भाला तब से अब तक ४४ बार चतुर्वेद वेद पारायण यज्ञ गुरुकुल गौतम नगर के प्रांगण में

कर चुकें हैं और गुरुकुल मंझावली में भी कई बार बड़े यज्ञों का आयोजन कर वेद की ज्वाला को आर्य जनों तक पहुचानें में सफल रहे हैं ।

नवम्बर सन् २००५ से ३ मार्च २००६ तक आपने गुरुकुल मंझावली में पाँच मास लगातार सवा करोड़ गायत्री एवं चतुर्वेद पारायण महायज्ञ का आयोजन किया और उसकी पूर्णाहुति के अवसर पर आपने महर्षि दयानन्द द्वारा निर्देशित आश्रम व्यवस्था के अनुसार ब्रह्मचर्य से सीधा संन्यास आश्रम ग्रहण समाज में एक उदाहरण प्रस्तुत किया। आपके दीक्षा-गुरु स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी भी एक आदर्श संन्यासी हैं। उन्होंने आपका नाम स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती रखा। इस अवसर पर आपके साथ अनेक विद्वानों ने भी संन्यास की दीक्षा प्राप्त कर आश्रम व्यवस्था का पालन किया। आपने संन्यास लेने के पश्चात् अनेक आर्य जनों को वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम की दीक्षा देकर आर्य समाज में अपना योगदान दिया।

आपके कदम केवल भारत में ही नहीं चले, अपितु देश के बाहर भी अनेक देशों में जाकर आपने वेद का सन्देश जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया। अमेरिका, हॉलैण्ड, मलेशिया, थाईलैण्ड, इण्डोनेशिया, मॉरिशस आदि अनेक देशों की यात्रा कर आपने वैदिक धर्म व वेद-ज्ञान को घर-घर तक पहुँचाया। अनेक राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलनों की अध्यक्षता आपने की है।

आज देश में ही नहीं, अपितु विदेशों में भी आपसे ज्ञान प्राप्त कर चुके स्नातक वैदिक परम्परा का संवर्धन कर हैं । अनेक छात्रों के तमसावृत जीवन को अपनी ज्ञानज्योति से प्रकाशित किया है, जो आज आपके कार्य को अग्रसर कर रहे हैं । आपके द्वारा शिक्षित स्नातक आज केवल आर्य समाजों में ही नहीं, अपितु अन्य क्षेत्रों में भी प्रतिष्ठित पदों पर कार्य कर रहे हैं । आपने लगभग १०० छात्रों को यजुर्वेद एवं सामवेद, लगभग १००० छात्रों को धातुपाठ, अष्टाध्यायी, उणादिकोष आदि ग्रन्थ कठस्थ कराकर संस्कृत एवं वैदिक साहित्य में नैपुण्यता प्राप्त कराकर देश-विदेश के विभिन्न सरकारी अर्द्धसरकारी व स्वायत्त संस्थाओं को समर्पित किया है।

आपने वेद व संस्कृत व्याकरण को अक्षुण्ण बनाने के लिए विश्व में प्रथम बार वेदादि ग्रन्थों को ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण कराकर एक विशिष्ट-कार्य किया है। १. यजुर्वेद २. सामवेद ३. अष्टायायी ४. लिंगानुशासन और फिट्सूत्रपाठ आदि। इसके साथ-साथ आर्ष साहित्य संस्थान की स्थापना कर अनेक वैदिक साहित्य एवं संस्कृत साहित्य का प्रकाशन समय-समय पर होता है।

आपके द्वारा शिक्षित अनेक शिष्यगण का संस्कृत एवं वेद-प्रचार के लिए जीवन समर्पित है।

१. आचार्य डॉ० धनंजय शास्त्री	२. आचार्य चन्द्र भूषण शाास्त्री	३. आचार्य जयकुमार शास्त्री
४. आचार्या शारदा	५. आचार्य अनन्त कुमार	६. आचार्य जितेन्द्र पुरुषार्थी
७. आचार्य अयन शास्त्री	८. आचार्य योगेश शास्त्री	९. पं. हीरा प्रसाद शास्त्री
१०. श्री शिवदेव शास्त्री	११. श्री अंकुश शास्त्री	१२. श्री शिव कुमार शास्त्री
१३. श्री बलदेव शास्त्री	१४. श्री निखिल शास्त्री	१५. ब्रह्मचारी सुनील शास्त्री
१६. ब्रह्मचारी वेद मित्र शास्त्री		

आज आपके धैर्य और उत्साह एवं आर्य जनों के सहयोग से ही सभी गुरुकुल निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर हैं, जिन संस्थाओं में छात्रों का सर्वांगीण विकास के लिए आर्षज्ञान, आधुनिक ज्ञान, क्रीड़ा आदि सभी क्षेत्रों में निपुणता प्राप्त कर रहे हैं। गत ४० वर्षों से मुझे (जितेन्द्र पुरुषार्थी को) भी आपका आशीर्वाद प्राप्त हो रहा है। महर्षि दयानन्द जी के मिशन को आगे बढ़ाने में मेरा सहयोग आपकी प्रेरणा से ही है। आपके हमेशा साकारत्मक विचारों से ही आगे बढ़ने का साहस प्राप्त होता है।

आज आर्य समाज गुरुकुलों से अनुप्राणित है, क्योंकि गुरुकुल ही आर्य समाज के रक्षकों को शिक्षित–दीक्षित करता है। आज वेद, उपनिषद्, दर्शन और आध्यात्मिक ज्ञान के लिए विश्व भारत की ओर देखता है। भारत अपनी प्रतिष्ठा के लिए आर्य समाज की ओर आशा की दृष्टि से देखता है और आर्य समाज गुरुकुलों की ओर निहारता है, तथा गुरुकुल आपसे प्राण पाते हैं। आप जैसे संघर्षशील पुरुष ही आर्य समाज के लौह स्तम्भ हैं।

आपके इन अविस्मरणीय कार्यों के लिए आर्य समाज आपका ऋणी रहेगा, आपने अपना अमूल्य जीवन देकर न जाने कितने लोगों को सन्मार्ग दिखाया है।
''**अग्निना अग्निः समिध्यते**'' इस वेद पंक्ति को चरितार्थ किया है। आपके लिए यदि कालिदास की इन पंक्तियों को कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी–

स्वसुख निरभिलाषः खिद्यसे लोकहेतोः, प्रतिदिनमथवा ते वृत्तिरेवंविधैव।
अनुभवति हि मूर्ध्ना पादपस्तीव्रमुष्णम्, शमयति परितापं छायया संश्रितानाम्।।

आज भी आपके उत्साह में कण भर भी कमी नहीं आयी है, उसी युवावस्था के उत्साह से आज भी आप आर्य जाति के प्रेरणा-स्रोत हैं। मैं आपकी दीर्घायुष्य एवं स्वस्थ जीवन की कामना करते हुए **'जीवेमशरदः शतम्'** की भावना को उद्भासित करता हूँ । ◙

आचार्य जितेन्द्र पुरुषार्थी

GIRMITIYA DIASPORA AND ARYA SAMAJ

The Arya Samaj movement, after its creation in 1875 spread throughout the world after only a short span of twenty-five years despite very limited means of communication. It is to be added that, during those days foreign travel for Indians was restricted by society regulations. On the other hand, people from all over the world used to come to India as students, traders, plunderers or even colonizers. But, much later, after several events, Indians started travelling and have adorned the image of their country wherever they have been. Likewise, one specific category of immigrants was settled in various continents through the Indentured Immigration System. It is not a secret for anybody as to the trials and tribulations those Indian immigrants had to undergo.

In such trying circumstances, the Arya samaj movement came to their rescue and gave them a new lease of life. Arya samaj not only helped them to better their lot but, also to play a vital role in the nation building process of their respective countries of adoption. Mauritius is one vivid example. Innumerable stalwarts of the Arya samaj from India visited the various continents as Vedic missionaries to give support and guidance to the Indian workers. Our neighbour South Africa, had the good fortune to welcome Prof. Bhai Parmanand M.A in 1905 as the first messenger of Swami Dayanand Saraswati. Swami Shankaranand, an inspiring figure with a good command of English Language, went there in 1908. The other missionaries who visited South Africa were Pt Ishwardutt Vedalankar (1921), Prof. Yashpal (1937), Pt Pravin Singh (1922), Pt Mehta Jaimini (1934), Pt Anand Priya (1934), Swami Mangalanand Puri (1913) etc.

However, the name of Pt. Nardev Vedalankar will be written in golden letters. Pandit ji was a scholar from Gurukul Kangri and arrived in South Africa in 1947 as a teacher of Gujarati and Hindi. He has made a lasting contribution by dedicating the rest of his life to the service of Vedic religion, Indian culture, Hindi and Sanskrit, in South Africa. Pandit ji has written several books, started various examinations, trained Vedic priests and founded benevolent organisations. Mauritius too, has gained a lot from the works of Pandit Nardev Vedalankar ji.

Swami Manoharanand Saraswati visited the Fiji Islands in 1913, Manilal Doctor in 1912, Pt Mehta Jaimini and Pt Shri Krishna Sharma in 1926, Pt Gopendra Narain Pathik in 1925 and Pt Amichand M.A in 1927. Arya Samaj in Suriname was inaugurated in 1911 only after the visit of Bhai Parmanand whereas, Arya Samaj in Guyana was established after the visit of Pt Mehta Jaimini in 1929. Pt Jaimini also visited Trinidad in 1934. Mauritius has been very lucky to welcome countless social workers, scholars and Swamis. The names of some are Manilal Doctor (1907), Dr Chiranjiv Bhardwaj (1911), Swami Virjanand, Swami Swatantranand (1950), Mehta Jaimini, Swami Dhruvanand (1956), Swami Narayanand (1952), Mahatma Anand Bhikshu (1954), Swami Vidyanand Videh, Acharya Krishna Ji, Swami Satya Prakash and Acharya Vaidyanath Shashtri.

But times have changed. We have to introspect and develop new strategies to face the increasing challenges of our global community. Arya Sabha Mauritius, after serious reflexion, has taken the laudable initiative of hosting the conference on the Girmitiya Diaspora. Our problems are identical and I am confident that the deliberations will be fruitful and these countries can show their solidarity for future activities.

The 200th Birth Anniversary Celebrations of Swami Dayanand Saraswati will be another milestone in the endeavour for bettering the lot of humanity through the dissemination of the Vedic principles, as propounded by Swami ji. It is to be underlined that the series of activities organised by Arya Sabha Mauritius in this context, will culminate in another international meet early next year. I wish all the delegates a fruitful deliberation.

Rajnarain Guttee

(Organising Secretary)

दक्षिण अफ्रीका में स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा हिन्दी का प्रचार

डॉ० रामभजन सीताराम, डर्बन-वेस्टविल्ल विश्वविद्यालय

यह एक स्थिर सत्य है कि विश्व में हिन्दी भाषा की उन्नति और प्रगति का श्रेय स्वैच्छिक संस्थाओं को ही प्राप्त है । पराधीन भारत में जब यह भावना बढ़ने लगी कि :

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,
बिनु निज भाषा ज्ञान के, मिटै न उर को सूल ।

तब राष्ट्र और भाषा-प्रेम से प्रेरित विद्वान हिन्दी के विकास और प्रचार में जुट गये । तत्कालीन साहित्यकार हिन्दी को जनमानस में प्रतिष्ठित करने के उद्देश्य से लोकप्रिय साहित्य का सृजन हिन्दी भाषा में करने लगे । व्यक्तिगत प्रयत्नों से आगे बढ़कर संस्थाओं की स्थापना होने लगी । हिन्दी साहित्य सम्मेलन, नागरी प्रचारिणी सभा जैसी स्वैच्छिक संस्थाएँ भारत में उस समय विकसित हुई जब अंग्रेज शासन अंग्रेजी भाषा को भारतीयों पर बलात् थोप रहा था । आगे चलकर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा और दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास, ये दो हिन्दी प्रचारक संस्थाएँ सामने आयीं, जिनका प्रभाव प्रवासी भारतीयों तक पहुँचा ।

उपरोक्त सभी आन्दोलन और प्रयत्न भारत में उस समय आरम्भ हुए, जब भारतीय शर्तबन्द मज़दूर उपनिवेशों में पहुँच चुके थे । 1834 में हिन्दी भाषी मॉरीशस गये, 1845 में ट्रिनिदाद, 1860 में दक्षिण अफ्रीका और 1872 में फीजी । हिन्दी साहित्य का 'प्रथम' उपन्यास 'परीक्षा गुरु' 1872 में ही लिखा गया । 'गिरमिटिया' मजदूरों की आर्थिक और शैक्षिक स्थिति अत्यन्त हीन थी । उनके पास भारतीय नागरिक के समान साधन और संगठन नहीं थे; 'यजमानों' की सेवा में । उपनिवेशों में इन मज़दूरों स्वामियों ने इनकी शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं की । इस विषय में डॉ० हेनिंग (1993:159) की राय है कि मज़दूरों के स्वामियों की भाँति सरकार ने भी इन पर कोई ध्यान नहीं दिया।

'प्रशासन शैक्षिक सुविधाएँ देने में अनिच्छा प्रकट करता था । परिणामतः 1870 से 1880 की कालावधि में (भारतीयों की) शिक्षा-व्यवस्था उनके सामाजिक-प्रयत्नों पर निर्भर थी ।'

ऐसी परिस्थिति में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषा-भाषी मज़दूर अपने धर्म, संस्कृति तथा भाषा के साथ कैसे जुड़े रहे, यह विचारणीय है । गिरमिट के सभी त्रास सहकर, एक नये देश और परिवेश के साथ समझौता करके इन्होंने जो नया जीवन बसाया, वह प्रशंसा और आश्चर्य का विषय है । भारत में, और उपनिवेशों में ये मज़दूर *"पराधीन सपनेहु सुख नाहि"* का जीवन अनुभव कर चुके थे, पर अपनी सांस्कृतिक संपत्ति को ही एकमात्र सहारा अथवा अवलम्ब मानकर एक गुलाम देश के मानव गुलामी की स्थिति में भी उस विरासत को जतन से रखने को कटिबद्ध थे ।

यही है वह रहस्य जिससे यह जाना जा सकता है कि हिन्दी भाषा दक्षिण अफ्रीका में किस तरह अनेक बोलियों अथवा उपभाषाओं के बोलने वालों के बीच प्रतिष्ठित हुई । भाषा वह रहस्यपूर्ण सूत्र बनी, जिसका उल्लेख डॉ० भगवान ने अपने शोध ग्रंथ में किया था (देवी भगवान : 1970) जिसके द्वारा हिन्दी-भाषी अफ्रीका में भी अपनी अस्मिता का बोध करते थे । भौतिक धरातल पर उनके जीवन में न्यूनतम परिवर्तन हुआ-भारत में जीवन कठिनाई से गुजरता था, दक्षिण अफ्रीका में भी यदि ये आध्यात्मिक दृष्टि से दुर्बल होते तो 'माया मिली न राम' कहकर अन्य प्रलोभनों में फँस जाते अथवा दूसरी संस्कृति, भाषा और धर्म को अपनाने लगते ।

ऐसा नहीं हुआ, क्योंकि इन अशिक्षितों के पास जो सांस्कृतिक निधि थी, वह रामायण, गीता और महाभारत की परंपरा से प्राप्त थी । तुलसीकृत रामचरितमानस इन हिन्दी-भाषियों के दैनिक जीवन में योगक्षेम का वहन करता था । मॉरीशस में जैसे बैठकाओं द्वारा धर्म और हिन्दी भाषा का प्रचार होता था, उसी तरह दक्षिण अफ्रीका में भी रामायण सभाओं के माध्यम से हिन्दी-भाषा भारतीय अपने जीवन के दुख-सुख, सपने और चिंताएँ और अनुभव प्रकट कर सकते थे । रिचर्ड बार्ज (1980:10) ने मॉरीशस की हिन्दी-भाषी जनता के सम्बन्ध में जो लिखा था वही सत्य दक्षिण अफ्रीका के हिन्दी-भाषियों पर लागू होता है । मॉरीशस में रामचरितमानस की धार्मिक-सांस्कृतिक शक्ति ने ही हिन्दी भाषा को गरिमा प्रदान की थी । दक्षिण अफ्रीका में आज भी लोग रामचरितमानस पढ़ने के लिए हिन्दी सीखते हैं ।

रामायण और पंचायत सभाएँ पहले व्यक्तिगत स्तर से शुरू हुईं । जब दो या अधिक व्यक्ति अथवा परिवार एक साथ रामायण चर्चा हेतु मिलने लगे, तब सभा का आरम्भ हुआ । इन स्वैच्छिक संस्थाओं का कार्यक्षेत्र शीघ्रता से विस्तृत होकर भाषा पढ़ाने की पाठशाला के रूप में परिणत हुआ । इन पाठशालाओं में हिन्दी भाषा और रामायण का अध्ययन सम्मिलित रूप से हुआ ।

दक्षिण अफ्रीका में हिन्दी भाषा क् यात्रा भोजपुरी, अवधी और अन्य बोलियों के बीच हुई । हिन्दी क्षेत्र के भारतीय मजदूरों ने भाषा को जीवित रखने और अपने मूल्यों को अगली पीढ़ियों में सुरक्षित रखने के लिए सराहनीय कार्य किया । पहले अपने घरों में किसी साक्षार व्यक्ति से हिन्दी पढ़ते थे, फिर छोटी पाठशालाएँ विकसित हुईं । इस संबंध में रामचरित का निम्नलिखित अभिमत दृष्टव्य है-

छोटी पाठशालाएँ विकसित हुईं । इस संबंध में रामचरित का निम्नलिखित अभिमत दृष्टव्य है-

'शिक्षित भारतीयों में, विशेषतः ब्राह्मणों में, शिक्षा एक पारिवारिक विषय थी । यदि माता-पिता अनपढ़ थे, गन्ने के खेतों और कोयले की खानों के श्रमिकों के बच्चे किसी पुरोहित या अन्य शिक्षित व्यक्ति के घर में प्रारम्भिक शिक्षा पाने के लिए एकत्रित होते थे ।' (रामबिरिच:1960:67)

रामायण सभाओं की स्थापना से इस कार्य में बहुत सहायता मिली । नागरी प्रचारिणी सभा, श्री रामायण सभा और अनेक मंदिरों की स्थापना से भाषा और धर्म के क्षेत्र में बड़ा योगदान मिला। सन् 1880 में ही श्री गोपाललाल मंदिर का निर्माण हुआ, जो आज तक रामायण का प्रचार और हिन्दी शिक्षा प्रदान करने में अग्रगण्य है ।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारत से धर्म प्रचारकों ने दक्षिण अफ्रीका में आकर स्वैच्छिक संस्थाओं की स्थापना की । प्रा० भाई परमानन्द सन् 1905 में आये । सन् 1908 में स्वामी शंकरानन्द का पदार्पण हुआ । इन्होंने वेद धर्म सभा नामक संस्था की स्थापना की । (महाराजः 1992:47)। इनके प्रयत्नों से हिन्दी भाषा को प्रोत्साहन मिला । स्वामीजी की प्रेरणा से 1912 में हिन्दू महासभा की नींव पड़ी ।

रामायण पंचायतों और सभाओं के कार्य सुचारु रूप से चल रहे थे । इधर आर्य समाज के प्रभाव में आने वाले भवानी दयालजी भी धर्म के साथ हिन्दी भाषा का प्रचार समर्पण की भावना से कर रहे थे। स्वामीजी अपने घर में हिन्दी सिखाते थे, और जब स्वयं रात्रि में काम करते थे, तो अपनी पत्नी और भाई देवीदयाल को शिक्षा का कार्य सौंप देते थे (भवानी दयाल : 1947-166)। स्वामीजी ने हिन्दी प्रचारिणी सभाओं की स्थापना की और 1916 में एक साहित्यिक सम्मेलन का आयोजन भी किया । सन् 1929 में राष्ट्रीय हिन्दी पाठशाला की स्थापना हुई, और इस संस्था का कार्य पिछले वर्ष तक चलता रहा । रामबिरिच के अनुसार (रामबिरिच : 1960:69) सनातन धर्म सभा (1941) ने भी हिन्दी का प्रचार किया। उनका कथन है कि—

'सनातनी हिन्दू संस्थाओं ने, जो मुख्य रूप से मंदिर की संस्थाएँ थीं, और जो पाठशालाओं का संचालन भी कर रहीं थीं, 1941 में सनातन धर्म सभा की स्थापना की । परन्तु हिन्दी प्रचार का महत्त्कार्य एक ऐसी संस्था को सुपुर्द करना था, जिसकी नींव अभी नहीं पड़ी थी ।'

दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीय 1860 से 1927 तक अपनी धार्मिक-सांस्कृतिक प्रगति स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा, अत्यन्त कठिनाइयों का सामना करते हुए, त्याग और समर्पण की भावना से प्रेरित होकर करते आये । इन्हें पूर्ण शिक्षा केवल ईसाई मिशन स्कूलों में उपलब्ध थी, और धर्म परिवर्तन के भय से बहुत कम संख्या में इन स्कूलों में प्रवेश करते थे । बड़ी विडम्बना की बात यह हुई कि जब 1927 में भारतीयों के उत्थान के लिए CAPE TOWN AGREEMENT में यह स्वीकृत हुआ कि भारतीयों को शिक्षा मिलनी चाहिए, प्रशासन ने उन्हें पाश्चात्य जीवन पद्धति अपनाने को कहा । भारत सरकार के प्रतिनिधि श्री श्रीनिवास शास्त्री ने भी यही सुझाव दिया-अतः भारतीय भाषाओं को स्कूलों में स्थान नहीं मिला । भौतिक धरातल पर पाश्चात्य शिक्षा, और धार्मिक सांस्कृतिक क्षेत्र में ईसाई धर्म का पलड़ा भारी हो रहा था । उसी वर्ष SOUTH AFRICAN INDIAN CONGRESS के KIMBERLEY अधिवेशन में जो प्रस्ताव रखा गया, कि भारतीय भाषाओं को सरकारी स्कूलों के पाठ्यक्रम में रखा जाय, उसका विरोध श्रीनिवास शास्त्री ने किया । (रामबिरिच : 1960:69)। यह प्रस्ताव रद्द हो गया । अन्त में स्वामी भवानी दयाल के परिश्रम से CONGRESS ने अपने संविधान में हिन्दी को अंग्रेजी और अफ्रीकांस के साथ आधिकारिक भाषा का स्थान दिलाया । परन्तु स्कूलों में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं को रखवाने का प्रयत्न किचलू कमीशन (टाइसन कमीशन) ने भी विफल किया । इस कमीशन ने यही सुझाव दिया कि भारतीय भाषाएँ सरकारी स्कूलों के बाहर, बच्चे अपने समय में सीख सकते हैं । अतः भारतीयों की आशाओं पर एक बार फिर वज्रपात हुआ ।

हिन्दी भाषा को लेकर एक चक्र पूरा हो गया । 1860 से जो भाषा घरों में और स्वैच्छिक संस्थाओं में पढ़ाई जाती थी, प्रशासन ने भी उसे समाज में प्रचलित संस्थाओं के हाथों में सौंप दिया । ये संस्थाएँ नाटाल प्रान्त में डर्बन, पीटरमैरिट्सबर्ग, स्टांगर, लेडिस्मित और अनेक शहरों में स्थित थीं । रामायण के प्रचार के साथ अनेक रामायण सभाएँ भी हिन्दी का प्रचार करती थीं । 1927 से, सब भारतीय बच्चों के लिए स्कूली शिक्षा की व्यवस्था हुई, इन स्वैच्छिक संस्थाओं का काम और भी कठिन हो गया । एक ओर इन संस्थाओं को सरकारी स्कूल के रूप में काम करना पड़ा, दूसरी ओर पाश्चात्य शिक्षा की प्रतिद्वन्द्विता में भी लगना पड़ा । भारतीयों ने हमेशा शिक्षा को महत्त्व दिया था, अतः शिक्षा के द्वारा उत्तम भविष्य का निर्माण सबका लक्ष्य बन गया । स्कूल के पाठ्यक्रम से बाहर होने के कारण हिन्दी भाषा की शिक्षा के सामने कठोर चुनौती उपस्थिति हुई । पाश्चात्य शिक्षा के प्रलोभन के सामने हिन्दी पढ़ने की उपादेयता सिद्ध करना दुष्कर कार्य था ।

अतः स्वैच्छिक संस्थाओं को दोहरा श्रम करना पड़ा । 1933 में सनातन धर्म उन्नति सभा और 1941 में सनातन धर्म सभा इस कार्य में लग गये । आर्य प्रतिनिधि सभा की पाठशालाएँ भी नाटाल प्रान्त के अनेक केन्द्रों में सक्रिय थीं । ये संस्थाएँ धर्म और भाषा दोनों के प्रचार में प्रयत्नशील थीं इससे उनके कार्य की सफलता में भी बाधाएँ उत्पन्न होती थीं । किसी एक क्षेत्र में पूर्ण सफलता नहीं मिल रही थी ।

उपरोक्त परिस्थिति में 1948 में पंडित नरदेव वेदालंकार द्वारा हिन्दी शिक्षा संघ की स्थापना हिन्दी भाषा के लिए एक ऐतिहासिक घटना थी । पंडित नरदेवजी वेदालंकार की हिन्दी सेवा के विषय में जितना भी कहा जाय कम होगा । स्वर्गीय पंडितजी ने धर्म, भाषा और संस्कृति के क्षेत्र में दक्षिण अफ्रीका में 45 वर्षों तक अथक परिश्रम किया और उनकी उपलब्धियों की अमिट छाप प्रेरणा प्रदान करती रहेगी । पंडितजी दक्षिण अफ्रीका में गुजराती भाषा प्रचार हेतु आये । सूरत हिन्दू ऐसोसिएशन ने अपनी पाठशाला में पंडितजी को अध्यापक के रूप में रखा । परन्तु पंडितजी की शिक्षा-दीक्षा गुजराती के अतिरिक्त वैदिक ज्ञान, हिन्दी और संस्कृत में भी थी । राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा में पंडितजी हिन्दी अध्यापक का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके थे; अतः दक्षिण अफ्रीका में पंडितजी ने हिन्दी शिक्षा संघ की पाठशालाओं में हिन्दी पाठ्यक्रम एवं शैक्षिक मूल्यों की स्थापना की । पाठ्यक्रम में सुधार, उपयुक्त पुस्तकों की तैयारी, आधुनिक प्रशिक्षण एवं परीक्षण पद्धति का समावेश और हमारे विद्यार्थियों का राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा, की परीक्षाओं में प्रवेश पंडितजी की देन है । हिन्दी शिक्षा संघ के स्कूलों के अतिरिक्त पंडित जी ने एम०एल० सुल्तान टेक्नीकल कॉलेज में हिन्दी की कक्षाएँ चलायीं । उन्होंने डर्बन-वेस्टविल्ल विश्वविद्यालय में गुजराती भाषा को प्रतिष्ठित किया और 78 वर्ष की आयु तक विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा विभाग में प्राध्यापक के पद पर रहकर भाषा, संस्कृति और वैदिक धर्म के उत्थान में अमूल्य योगदान दिया ।

हिन्दी शिक्षा संघ दक्षिण अफ्रीका में हिन्दी प्रचार की प्रमुख स्वैच्छिक संस्था है । लगभग 50 वर्षों में इस संस्था ने जो योगदान दिया है, उसके परिणामस्वरूप हिन्दी भाषा का भविष्य निश्चित है । हिन्दी शिक्षा संघ हिन्दी भाषा, साहित्य, शिक्षण पद्धति और धर्मशिक्षा की कक्षाएँ चला रहा है । इस वर्ष, 'हिन्दी भवन' के निर्माण की पूर्ति से इस संस्था को एक नयी दिशा प्राप्त हुई । दक्षिण अफ्रीका के हिन्दी-भाषी भारतीय नागरिकों के लिए यह संस्था गौरव और आशा का प्रतीक है । संघ के कार्यक्षेत्र के विस्तार से उसका महत्त्व और भी बढ़ जाएगा ।

1927 से 1977 तक दक्षिण अफ्रीका में हिन्दी का प्रचार स्वैच्छिक संस्थाओं का उत्तरदायित्व रहा है । इसका तात्पर्य यह है कि हिन्दी-भाषी जनता को ही अपनी भाषा को जीवित रखना पड़ा। "NON-GOVERNMENTAL ORGANISATION" से यही भाव प्रकट होता है कि जो कार्य सरकार को करना चाहिए, वह समाज द्वारा किया जाता है । 1977 से स्कूलों में भारतीय भाषाओं का प्रवेश हुआ, तथापि इनके अध्ययन के लिए मार्ग सीधा नहीं है । दक्षिण अफ्रीका के नये संविधान में भी भाषाओं के लिए सुविधा दिलाने की बात है, परन्तु पाठ्यक्रम को रूप धारण कर रहा है, उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय भाषाएँ स्कूल में पुष्पित और पल्लवित नहीं हो पायेंगी । इस निष्क पर पहुँचने का मुख्य कारण है, दक्षिण अफ्रीका के संविधान में ग्यारह आधिकारिक या राजभाषाओं की स्वीकृति । हरेक प्राप्त में अंग्रेजी और अफ्रीका के साथ एक अफ्रीकांस भाषा पढ़ाई जा रही है । भारतीय भाषाओं को स्थान नहीं मिलेगा ।

अतः स्वैच्छिक संस्थाओं को पुनः हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के विकास, प्रचार एवं प्रसार का भार संभालना होगा जहाँ पूर्व के प्रशासन उदासीन रहते थे, नया प्रशासन प्रोत्साहन देने को तैयार है । संभवतः इन स्वैच्छिक संस्थाओं को सरकार द्वार मान्यता तथा आर्थिक सहायता प्राप्त होगी, जिससे इनके कार्य में सुविधा होगी । हिन्दी भाषा का अनुभव प्रवासी भारतीयों के बीच विविध रूपी है । दक्षिण अफ्रीका में अभी मॉरीशस जैसी स्थिति नहीं है, जहाँ अनेक विद्वान, साहित्यकार और कवि कीर्ति प्राप्त कर चुके, फिर भी यहाँ भाषा प्रेमियों का अभाव नहीं है । सुख-सुविधा और सांस्कृतिक चेतना में समन्वय आने पर हिन्दी की उन्नति निश्चित है । इस दिशा में स्वैच्छिक संस्थाओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण होगी ।

संविधान में PAN AFRICAN LANGUAGE BOARD की व्यवस्था है, जिसका काम दक्षिण अफ्रीका में बोली जाने वालो भाषाओं को सम्मान और सहायता पहुँचाना है । संविधान में संस्कृत हिन्दी और दक्षिण अफ्रीका में प्रयुक्त अन्य भारतीय भाषाओं का उल्लेख है; अतः इन भाषाओं के प्रति जो लोग प्रतिबद्ध हैं, उन्हें सरकार की मदद से भाषाओं का प्रचार करना होगा । स्कूल व्यवस्था के बाहर से भी भारतीय भाषाएँ पाठ्यक्रम में प्रविष्ट हो सकती हैं । सामाजिक संस्थाएँ इन भाषाओं को हाई-स्कूल के पाठकों को पढ़ा सकती हैं और ये पाठक परीक्षा बोर्ड की परीक्षाएँ दे सकते हैं । कुछ देशों में इस प्रकार के प्रयोग हो चुके हैं । अन्त में काम इन सामाजिक स्वैच्छिक संस्थाओं को ही करना पड़ेगा अतः इनका महत्त्व पहचान कर इन्हें सक्षम बनाने का संकल्प अति आवश्यक है ।

(पंकज ग्यारहवाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन विशेषांक 2018 - साभार)

Arya Samaj in Countries of Indian Diaspora - The Mauritian Case

Mrs Artee Paupiah

Our island was first colonized from 1658 to 1710 by the Dutch. Then, the French established their rule as from 1715 to 1810. Initially, slaves from Africa and Madagascar were brought to work in the sugarcane fields which developed into a sugar industry by the nineteenth century. After that, the British seized the island in 1810 and governed it until 1968. On February 1st, 1835, slavery was abolished in Mauritius and 65,000 African and Malagasy slaves were liberated.

Subsequently, a cheap workforce required by the industry was met through indentured labour. Indentured workers were recruited from India and conveyed to various British colonies across the world to work on plantations. The majority were from Bihar and Eastern Uttar Pradesh. Among the indentured workers were coolies, errand boys, domestic servants, cooks and cooks' assistants, grooms and coachmen and a host of others such as hawkers, barbers, peons, ex-policemen, pujaris, dancing-girls and their male attendants, street musicians and entertainers, prostitutes, pickpockets and thieves. According to available estimates, between 1834 and 1920, nearly 700,000 Indian indentured labourers landed at the Aapravasi Ghat, an immigration depot located in the harbour of Port-Louis.

System of Modified Slavery

Although, a five-year contract was signed that guaranteed a wage and free passage back to India, work and living conditions were very close to slavery, at least during the years 1837 to 1853. The Indenture System in Mauritius was nothing less than a system of modified slavery, an autocratic, capitalistic regime in which the end product and the material gains mattered more than human life.

The seed of the Arya Samaj (Society of the Nobles) was haphazardly sown on Mauritian soil in 1898 by Subedar Bholanath Tiwari of the first Bengal Infantry, a religious man who had brought with him a copy of the *Satyartha Prakash* of Swami Dayananda Saraswati, the founder of the Arya Samaj in Bombay in 1875.

Mahatma Gandhi's Visit

The first year of the last century was marked by the visit of Mohandas Karamchand Gandhi to Mauritius. On 30th October 1901, while he was on his way from South Africa to India, he landed in Port-Louis and stayed in Mauritius until 19th November 1901. He could address the Indians and laid emphasis on the education of children, the need for all communities to live harmoniously and the participation of Indians in local politics. As a result, two years after Gandhi's visit, a small group of progressive Hindus founded the Arya Samaj.

Khemlall Lallah, Guruparsad Duljeetlall, Gayasingh Ramkhelawonsingh and Ramsharan Moti tried hard to establish the Arya Samaj in 1903, 1906 and 1907 respectively but every time their efforts failed because the migrant Indian community in Mauritius was still plunged in darkness owing to lack of education and age old orthodoxy. As such, in 1907 Manilal Maganlal Doctor, a lawyer with M.A. and LLB degrees was sent by Mahatma Gandhi to defend the interest of the Indian labourers in court and promote their empowerment in Mauritius.

Eventually, with his support the local Arya Samaj was placed on a firm footing in 1910 with the help of Ramjeelall, Khersingh, Lekhram, Moonsasingh and Pandit Gayasingh. The new society was later supported by Doctor Chiranjiv Bhardwaj, Swami Swatantranand and Pandit Cashinath Kistoe.

The principles of Arya Samaj began to infiltrate the Hindu community who clamoured for more social justice. This reformist movement had a major impact on the island's religious, educational and political life by stimulating religious reform and a revival of Indianness. The Arya Samaj was the first Hindu institution to open a primary school at Vacoas (Aryan Vedic) in 1918. Today, Mauritius provides free education from pre-primary to tertiary levels. Schooling in the country is compulsory upto the age of 16 as stipulated in the *Satyartha Prakash*.

Intellectuals and Leaders

The Arya Samaj has also produced several intellectuals and leaders like Dr. Jugroo Seegobin, Mohunlal Mohith, Teeluckparsad Callychurn, Bramduth Nundlall, and among the women are Soodevi Bhima and Luckhawtee Hurgobin. It has immensely contributed to the evolution of the political system of Mauritius.

Today, the Mauritian population that originated from Indian indentured migrants is not a minority dependent on their country of origin but a majority community that has greatly contributed to the building of the Mauritian nation.

As such, the 2nd November is an important date in the history of Mauritius because it is considered as the day to commemorate and to reflect on the arrival of the first indentured labourers, their toils and sacrifices and their contribution in the making of Mauritius

Their arrival has significantly altered the demography, society, economy, and politics of this small Indian Ocean island, even if most towns and villages bear French or English names.

प्रवासी भारतीय और आर्य समाज

— डॉ० लालदेव अंचराज

सन् 1833 में हुआ अन्त दास प्रथा का
उनका माथा ठंका ब्रिटीश साम्राज्य का
होगा कैसे अब काम खेती-बाड़ी का
आया उनको ध्यान भारतीयों का
आरंभ किया उन्होंने मॉरीशस में आगमन भारतीयों का
था ज्ञात उनको मॉरीशस में भारतीयों के कामों का
था यह अभिशाप या वरदान प्रवासी भारतीयों का
नहीं ! था यह वरदान प्रवासी भारतीयों का,
क्यों ? इस लिए कि मॉरीशस में हुआ पदार्पण आर्य समाज का
सन् 1905 मॉरीशस आर्य समाज की स्थापना प्रवासी भारतीयों का
था काल नवजागरण का तथा नवोन्मेष स्वतंत्रता का
दिया आर्य समाज ने प्रवासी भारतीयों को कवच आर्थिक बल का
दिया आर्य समाज ने आभूषण सामाजिक समता का
दिया वरदान प्रवासी भारतीयों को धर्म एवं संस्कृति का
दे कर ढाल मॉरीशस माँ की स्वतंत्रता का
प्रवासी भारतीयों एवं आर्य समाज ने पाया सहयोग मणिलाल डॉक्टर का
आर्य समाज बना एक सुधारवादी संस्था प्रवासी भारतीयों का
किया प्रचार घर-घर में आर्य भाषा हिन्दी का
दिया जन-जन को संदेश स्वतंत्रता का
चमकाया भाग्य आर्य समाज ने प्रवासी भारतीयों का
दिया आर्य समाज ने संदेश प्रवासी भारतीयों को एकता का
फूँका मंत्र आर्य समाज ने प्रवासी भारतीयों में देश प्रेम का
दी आर्य समाज ने विभिषिका प्रवासी भारतीयों को त्याग और बलिदान की
प्रवासी भारतीयों ने किया एक विलक्षण-कार्य हिन्दी शिक्षण का
दिया उन्हें ज्ञान भले-बुरे के निर्णय का
आर्य समाज ने दिया कवच प्रवासियों को
कवच जीवन पथ पर आगे बढ़ने का
प्रवासी सेनानियों को दिया अमोघ बाण विजय का
1948 का आम चुनाव था वरदान आर्य समाजियों का
प्रवासी भारतीयों को हुआ भान 1946 के नए संविधान का
प्रवासी भारतीयों एवं आर्य समाज के सहयोग से हुआ मंगल बिहान देश का
यह था परिणाम प्रवासी भारतीयों और आर्य समाज के योगदान का
खास करके भारतीय नारियों को मतदान के लिए तैयारी का
विशेष योगदान रहा दृढ़ अडिग आर्य समाज का
चमका दिया भाल प्रवासी भारतीयों एवं आर्य समाज ने मातृ-भूमि मोरीशस का
सिर-रख दिया सरताज परम प्रिय अमर स्वतंत्रता का
दिला दिया अधिकार हर मोरिशसवासी को सर उठा कर जीने का ।

टेम्पल गली,
लावाँचिर

Girmitiya in Fiji

Indian indentured emigration to Fiji began in 1879. It was started by Sir Arthur Gordon, the first substantive governor of the colony (1875-80), to meet the shortage of labour caused by the prohibition of commercial employment of the Fijians and by the increasing uncertainty and cost of the Polynesian labour trade. A heartfelt homage should be paid to the Girmityas, Indian indentured labourers, whose journey to Fiji under British colonial rule from 1879 to 1916 shaped the nation's socio-cultural landscape. "Under this system, Indian labourers were recruited from British India to work on sugar plantations in Fiji, which was then a British colony. During this period, more than 60,000 Indians were brought to Fiji under indenture and became known as Girmitiyas."

Hinduism in Fiji has a following primarily among Indo-Fijians, the descendants of indentured workers brought to Fiji by the British as cheap labour for colonial sugarcane plantations. Hindus started arriving in Fiji in 1879 and continued through 1920, when Britain abolished the slavery-like indenture system. Muslim presence in Fiji is the result of the introduction of indentured Indian labour there in the interests of the British Empire. Between 1879 and 1916, some 60,553 Indian labourers came to Fiji; of these 7,635 (males 5,098, females 2,537) or 12.61% of the total were Muslims. South Asians were initially brought to Fiji as indentured laborers to work on sugar cane plantations. Between 1879 and 1916, a total of 60,000 South Asians arrived in Fiji. Approximately 25,000 of these returned to South Asia.

Fiji recognised the 143rd anniversary of 'girmit' as never before in recent history, marking the arrival of Indian indentured workers in the country on May 14, 1879. The first ship *Leonidas* was followed by 86 other ships that landed 60,965 Girmitiyas in Fiji from 1879 to 1916. Linguistic evidence suggests that they came from northern or central Vanuatu, or possibly the eastern Solomons. Before long they had moved further on, colonizing Rotuma to the north, and Tonga and Samoa to the east.

An abhorrent trade

In 1834, the British Slavery Abolition Act came into force, abolishing slavery throughout the Empire. Though billed as a revolutionary moment in world history, the wheels of slavery were reinvented and renamed, and the indentured labour system was instituted throughout the Empire. Under the indenture system, which lasted from 1834-1917, the British employed Indian labour for five-year terms, with some 1.2 million Indians serving, largely as plantation workers.

For Fiji, a British colony, 60,965 Indian indentured labourers were recruited to work in the country's sugarcane plantations. As the workers were generally illiterate, the system came to be known as 'Girmit' (derived from the word 'agreement'), and later the labourers came to be called 'Girmitiyas'.

While the system differed from slavery in that workers were hired for periods of five years, it was still based on deceit and exploitation. In the recruitment of workers, the districts of Gonda, Basti, Faizabad, Sultanpur, Azamgarh, Gorakhpur, Allahabad, Jaunpur, Shahabad and Rae Bareilly in the United Provinces and Bihar were targeted. These districts often suffered natural calamities in the form of droughts, floods and famines. In 1903, recruitment was extended to South India.

Prospective workers were told of the riches that awaited them in Fiji. Some were told that Fiji was part of India, or near India, that the nature of work varied, and that they could return in five years laden with fortune. The labourers were then taken to the sub-depots where they joined others for the journey ahead. Many soon realised that their freedom was lost. None could escape. Those who resisted were kept in isolation without food or intimidated into submission.

As ships departed from the river Hooghly in darkness, recruits were unable to experience visually their laceration from the motherland. Still, there was resistance. In the second ship *Berar*, and third ship *Poonah,* bound for Fiji in 1882, fifteen people found separation from the motherland unbearable. They jumped overboard and got drowned. Subsequently, all coolie ships, as they came to be derisively called, were accompanied by boats until they reached the open seas.

Of the 60,965 recruits registered for transportation to Fiji, hundreds died at sea. In the nocturnal hours, their bodies were disposed of without rites or ritual. It took three months by sail ship and one month by steam ship to reach Fiji. Despite the hardship during this period, a type of bonding occurred among the recruits who called each other *jahajibhai* (shipmates).

Planting resentment

On reaching Fiji, the recruits were kept in quarantine on Nukulau Island before being allocated to the plantations. On the day of allocation, the recruits were formed into groups for plantation owners to transport them by boat to their destinations. The largest number of Girmitiyas were allocated to the CSR Company that operated sugar mills and had its own sugarcane plantations.

Paucity of women created grave social conditions. Cases of polyandry were known in many plantations, and women bore the brutishness of the 'Girmit' system, with no rights to justice.

On 4 November 1912, Hannah Dudley, a Methodist missionary who worked with Girmitiya women in Nausori, wrote movingly in an open letter directed to Indian leaders asking them to rescue their compatriots from the infamy of Girmit in Fiji, and to abolish the system as it was beyond redemption. She claimed that she was haunted by the looks of fear and despair on the faces of Girmitiya women returning from the plantation after a day's work. In 1919, largely due to public pressure in India, the system of indentured labour ended.

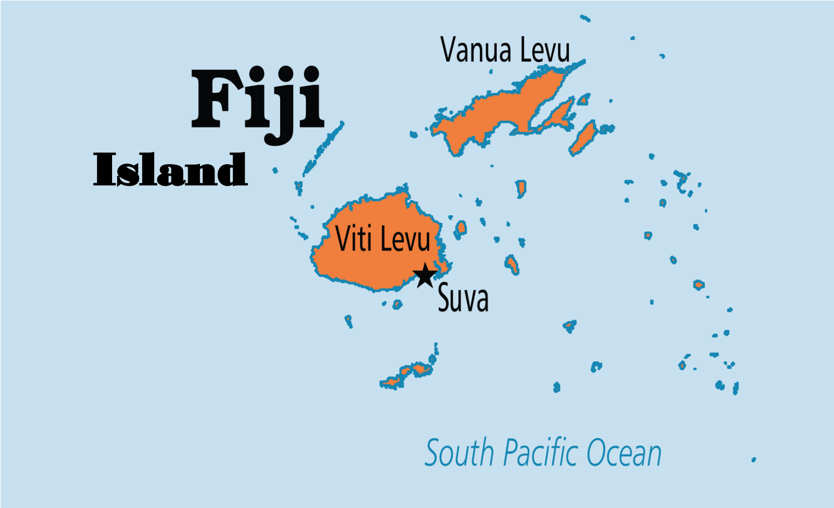

Emergence of a subculture

Circumstances changed for the Girmitiyas when they became marooned in Fiji through the deception of the indenture system. While most had signed five-year contracts, to qualify for a free return passage to India, the Girmitiyas were required to stay in Fiji for another five years. The idea behind this provision was that they would re-indenture or break their links with the homeland and stay back in Fiji, thereby providing for the labour needs of the colony. But few re-indentured: most engaged in farming to support their livelihood and began raising families.

In the aftermath of Girmit (1879-1919), a new diasporic subculture of Indianness took root in Fiji. The Girmitiyas had come largely from the United Provinces, though approximately 15 percent were from the south. Two dialects of the Indian subcontinent, Awadhi and Bhojpuri, prevailed over others and produced a distinct lingua franca, which came to be called Fiji Hindi. Though it is a distortion of Hindi, it gained strength and influence from Bollywood films released during the 1950s. Fiji Hindi also posesses a strong sprinkling of Urdu that adds a distinct quality to it. Descendants of those from South India today also speak Fiji Hindi and Tamil, while Telugu and Malayalam languages are no longer spoken among the younger generations. The Indo-Fijian culture evolved in relative obscurity, though it has been refined and adapted through its interplay with Western culture, and now exists even outside of Fiji while retaining its distinctive character.

Despite the crystallisation of a common culture and identity, the descendants of the Girmitiyas of Fiji have faced systemic political and economic marginalisation. In the post-Girmit, pre-Independence period (from 1920-1970), Indo-Fijians strived for equality with Europeans, but retained second-class citizenry and had very little influence on government plans and policies.

Luxhmee Jaypaul

कविता – गिरमिटिया

हर २ नवंबर को मनाते हैं
गिरमिटिया दिवस
आए थे मज़दूर
पर बन गये गुलाम
शोषण और अत्याचार सहकर
जीए हमारे देश में देश भक्त बनकर।

साथ लाए थे रामायण और गीता जैसे धार्मिक ग्रन्थ
उन्होंने अपनी आजीवन छाप छोड़ी

मॉरीशस को आज़ाद किया गुलामी से
देश-भक्ति मूल्य का जागरण किया
वे सच्चे स्वतंत्रता सेनानी थे।

मॉरीशस को लघु भारत का नाम मिला
वे इतिहास के प्रणेता बने
उन्होंने मूल्य और संस्था का महासागर फैलाए।

लक्ष्मी जयपोल

त्रिनिदाद और टोबैगो में आर्य समाज

त्रिनिदाद और टोबैगो : इतिहास एवं झलक

त्रिनिदाद और टोबैगो एक कैरिबियाई देश है। यह कैरिबियाई सागर में स्थित है तथा यह टापू वेनेजुएला के उत्तर पूर्व में पाया जाता है। त्रिनिदाद और टोबैगो का क्षेत्रफल 5,130 वर्ग किलोमीटर है यह कई द्वीपों के समूह से बना है। त्रिनिदाद और टोबैगो इसके दो प्रमुख द्वीप हैं। त्रिनिदाद इस द्वीप समूह का सबसे बड़ा टापू है, जिसका क्षेत्रफल लगभग 4,822 वर्ग किलोमीटर है। यहाँ देश की जनसंख्या के 96 प्रतिशत लोग बसे हुए हैं। इस द्वीप समूह की राजधानी पोर्ट ऑफ़ स्पेन है और इसके सबसे बड़े शहर का नाम चगुआनास है। माननीय श्री केथ रैले यहाँ के प्रधान मंत्री का पद सँभाल रहे हैं। श्रीमती कमला परसाद बिसेसर त्रिनिदाद की नेता प्रति हैं। श्रीमती कमला परसाद बिसेसर त्रिनिदाद और टोबैगो की छठी और प्रथम महिला प्रधान मंत्री रहीं। अंग्रेज़ी यहाँ की राजभाषा है, क्योंकि जब अंग्रेज़ों ने इस उपनिवेश पर 165 वर्षों तक शासन किया, तब इसके प्रशासन तथा न्याय व्यवस्था पर अंग्रेज़ी की छाप तो दिखनी ही चाहिए। वास्तव में, 1498 में, कोलंबस ने इस देश की धरती पर कदम रखा और स्पेन के शासन का उदय हुआ। 18 फ़रवरी 1797 में ब्रिटेन ने स्पेन से यह देश छीन लिया। वास्तव में, इन तीन सौ सालों के अन्तराल में फ्रेंच, कौरलैंड (लातविया, जर्मन, पोलैंड तथा रूस आदि देशों का समूह) तथा डच का भी समय-समय पर शासन रहा। मई 1802 में, एमिएन्ज़ की संधि के बाद त्रिनिदाद और टोबैगो पर पूरी तरह से अंग्रेज़ों ने अपना आधिपत्य जमा लिया तथा 1962 में लम्बे संघर्ष के बाद इस देश ने पराधीनता की बेड़ियों को तोड़ा। जनता ने खुली हवा में साँस ली और यह देश प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हुआ।

प्रमुख भाषाएँ

त्रिनिदाद और टोबैगो की औपचारिक भाषा अंग्रेज़ी है, किंतु यहाँ के लोग आम बोलचाल के लिए त्रिनिदाद क्रिओल और तोबागोना क्रिओल का प्रयोग करते हैं। वास्तव में, 'क्रिओल' दो या कई भाषाओं एवं बोलियों का मिश्रण होता है, जिसका प्रयोग संसार के अलग-अलग क्षेत्रों से आए लोगों के बीच संपर्क स्थापित करने के लिए किया जाता है और बाद में ये उस क्षेत्र-विशेष में संप्रेषण का प्रमुख माध्यम बन जाता है। त्रिनिदाद क्रिओल की संरचना अंग्रेज़ी भाषा के ढाँचे पर की गई और उसपर स्पैनिश, फ्रेंच, हिंदुस्तानी, तमिल तथा अफ़्रीकी आदि कई भाषाओं की छाप है। अतः यहाँ की भाषाएँ अपनी स्पेनी, भारतीय, अफ़्रिकी तथा यूरोपीय धरोहर को उजागर करती हैं।

जनसंख्या की बनावट

इस टापू समूह पर, औपनिवेशिक शासकों ने दूसरे देशों से लोगों को लाकर यहाँ बसाये थे। इसीलिए विदेशी उपनिवेशीकरण तथा आप्रवासन से खड़े किए गए इस देश में 80 प्रतिशत से अधिक भारतीय एवं अफ़्रीकी मूल के लोग हैं। जनसंख्या में भारतीयों और अफ़्रिकी मूल के लोगों का अनुपात लगभग बराबर ही है। बाकी के 20 प्रतिशत लोग यूरोप, चीन, सिरिया, लेबनान तथा अमरीका से आए हुए आप्रवासियों के वंशज हैं। जहाँ तक इस द्वीप समूह के मूल निवासियों का प्रश्न है, कहा जाता है कि 15वीं से 16वीं शताब्दी तक त्रिनिदाद में अरावाक, नेपोया, सुपोया, याओ और कैरीब तथा टोबैगो में कैरीब और गालिबी जाति या समूह के आदिवासी लोग रहते थे। ये मूल निवासी बाद में सूरीनाम टापू पर रहने चले गए।

त्रिनिदाद और टोबैगो में प्रमुख धर्म

त्रिनिदाद और टोबैगो एक बहुजातीय, बहुसांस्कृतिक देश होने के साथ-साथ एक धर्मनिरपेक्ष देश भी है। यहाँ कोई भी धर्म प्रमुख नहीं है। यहाँ 62.3 प्रतिशत ईसाई धर्मावलंबी हैं, 20.4 प्रतिशत हिंदू धर्म के मानने वाले हैं, 5.6 प्रतिशत लोग इस्लाम को मानते हैं। ऐसा माना जाता है कि यहाँ 27 से अधिक धर्मों एवं संप्रदायों को मानने वाले लोग रहते हैं। साथ ही यहाँ जनसंख्या का एक भाग ऐसा भी है जो किसी भी धर्म को नहीं मानता है; पूरी तरह नास्तिक है।

आर्य समाज

20वीं शताब्दी के आरंभ में त्रिनिदाद और टोबैगो में आर्य समाज का आन्दोलन फैला और 1930 के दशक में 'आर्य समाज एसोसिएशन' के नाम से एक नए संगठन की स्थापना की गई। कालान्तर में इस संगठन का नाम बदलकर 'आर्य प्रतिनिधि त्रिनिदाद' रख दिया गया। आरंभ में आर्य प्रतिनिधि त्रिनिदाद का प्रमुख उद्देश्य आर्य समाज के मंदिरों और स्कूलों के निर्माण को प्रोत्साहन देना था।

1910 में, त्रिनिदाद की धरती पर कदम रखने वाले आर्य प्रचारक भाई परमानन्द ने कई आर्य पंडितों को वहाँ आने के लिए प्रेरित किया। 1929 में पहुँचे पंडित मेहता जैमिनी ने माराबेला में एक भवन बनवाया ओर वहाँ हिंदी की कक्षाएँ आरंभ कीं। 1934 में पहुँचे पंडित अयोध्या प्रसाद ने उन लोगों की शुद्धि की जिन्होंने हिंदू धर्म छोड़कर ईसाई धर्म अपना लिया था। जिन लोगों को अपने माता-पिता के निर्णय पर ग्लानि का अनुभव हो रहा था उन्हें पुनः हिंदू धर्म अपनाने और अपना मूल अस्तित्व प्राप्त करने का अवसर मिला। पंडित अयोध्या प्रसाद ने चगुआनास में प्रथम आर्य मंदिर की स्थापना की जिसका प्रयोग प्राथमिक पाठशाला के रूप में हुआ।

1946 में आर्य प्रतिनिधि सभा का विभाजन हुआ और इस सभा के एक घटक ने 'वैदिक धर्म प्रचारक सभा' संस्था की स्थापना की, जो बाद में चलकर 'त्रिनिदाद की वैदिक धर्म आर्य सभा' के नाम से प्रचलित हुई। 1947 में सोलोमन मुसई-महराज ने 'कैरेबियन वैदिक परिषद' की स्थापना की। 1950 के दशक में परिषद की पहली बैठक क्योरपे में बुलाई गई। इसके बाद प्रति वर्ष एक सम्मेलन आयोजित किया जाने लगा। अभी त्रिनिदाद की आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष श्री रवि रामबरन जी हैं।

त्रिनिदाद की धरती पर आर्य समाज की प्रासंगिकता

आर्य समाज की देख-रेख में कई समाज सुधार तथा उत्थान के कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। भारतीय संस्कृति तथा हिंदी भाषा के त्रिनिदाद की धरती पर प्रसारित करने में आर्य समाज ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आर्य समाज ने हिंदू समाज को विदग्ध करने वाली उस ज्वाला को रोका जो हिंदुओं को दूसरे धर्म अपनाने के लिए विवश कर रही थी। आज पूरे विश्व में वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में आर्य समाज जो महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहा है, उसके लिए केवल हिंदू समाज ही नहीं पूरा मानव मात्र ऋणी रहेगा।

(स्रोत : इन्टर्नेट)

डॉ. सोमदत्त काशीनाथ
अनुसंधान एवं विकास अधिकारी
विश्व हिंदी सचिवालय, मॉरीशस
दूरभाष तथा व्हाट्सप – 230 5786 6071

The Legacy of Arya Samaj in Countries of Indian Diaspora

"With the revolution of Brahm Gyaan, the day you attain peace within, that day external peace will prevail too. The day the sun of new era dawns within you, the very same day it will dawn outside too." If there is a delay in attaining world peace then it is because of us only. This is why, it is of a paramount importance for each and every Arya to understand clearly and thoroughly that in front of us are lying scattered our own character's pieces. It is our very own duty to assemble them and by getting assembled alone, will the objective of awakening to global peace be accomplished. Having a microscopical view on this very fact, Arya Samaj has already put a step ahead. We can have this insight by having a look at countries of Indian Diaspora where Arya Samaj is established. We can see everywhere that : all countries of Indian Diaspora are harmonizing their personality via which they are associated in the mission and vision of Arya Samaj.

If we are a good observers, we can firstly see that Swami Dayanand holds a flag in which is written, "Paakhand Khandini Pataka", implying to end all sorts of hypocrisy and imposture. It is an undeniable fact that, wherever Arya Samaj has brought its mission, in that place the level of imposture, hypocrisy, dogmas and other negative alternatives are low. The reason is that, Arya Samaj, with the divine grace and will of the Supreme Self by the medium of Swami Dayanand has chosen us, people of various nationalities yet of that same origin and 'Rishi Parampara' as individuals with whom Arya Samaj would reach out the summum of the whole world. We are the builders of this new era where falseness will be at its lowest ebb and the truth will be shining like a star at the highest point of the universe. Many of us might think that, we are all following the footsteps of Swami Dayanand with all our efforts, still our transformation has not rectified every person in our family. Then how can our efforts bring and establish peace in the world?

There is a universal law known as the law of correspondence. The law states; "As above so below, as below so above, the same pattern is expressed on all plains of existence from the smallest electron to the largest star and vice versa, all is one." If we have a close up understanding to this law, we can see that Swami Dayanand has already given us the answer to the above question, in the third principle of Arya Samaj that, "The Vedas are the book of all true knowledge. It is the main duty of all the Aryas to read, to preach, to listen, to hear them being read." This claims that, we should not just read, because by reading we will be able to rectify only ourselves and not bring changes in others' life. Hence, alongside reading we should preach them and motivate people to live their life according to the Vedas. They shall then others experience the peace that we are experiencing.

This is the legacy of Arya Samaj in various countries of Indian Diaspora. We can see that little by little, Arya Samaj is gaining momentum the day is not far when we will be accommodating the whole world under the same roof of Arya Samaj.

Surensing Runglall

The first (efficient) cause of all true knowledge and all that is known through knowledge is parameshvara (the Highest Lord i.e. God).

1st Principle of Arya Samaj

मॉरीशस के विकास में आर्य समाज का योगदान

श्रीमती उमा दुखन

समय-समय पर बहुत सारे समाज-सुधारक इस धरा पर प्रकट हुए हैं। महर्षि दयानन्द के अनेकों शिष्य हुए हैं, जैसे स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय, भगत सिंह, चंद्रशेखर आज़ाद इत्यादि, जिन्होंने अपने गुरुदेव के आन्दोलन को आगे बढ़ाया। उन्हीं यादों के सौगाद की बदौलत आज समस्त संसार में आर्य समाज का विस्तार हुआ है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने गुरु स्वामी विरजानन्द को जो गुरु दक्षिणा दी थी, उसीके अनुसार अपने जीवन की अंतिम सांस तक विविध कार्य किये। उनकी शिक्षा आज भी प्रासंगिक है। यह इसलिए कि उन्हींके संकल्प के आधार पर आज समस्त जगत् में आर्य समाज की ध्वनि गूँज रही है। आज न केवल भारत और मॉरीशस, अपितु दक्षिण अफ्रीका, सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुयाना, फिजी इत्यादि देशों में आर्य समाज एक विशेष भूमिका निभा रहा है।

आर्य समाज की लहर मॉरीशस के धरातल पर तब उतरी थी, जब इस देश में गिरमिटया मज़दूरों के पाँव पड़े थे, आज से लगभग १८० साल पहले। परन्तु, अंग्रेज़ों का शासन मॉरीशस में इस कदर खौफ फैला रहा था कि उस समय मॉरीशस में हिंदुत्व और आर्य समाज का विस्तार नहीं हो पाया था। २० वीं शताब्दी के आरम्भ में जब मणिलाल डॉक्टर और डॉ0 चिरंजीव भारद्वाज मॉरीशस आए तब भारतीय संस्कृति, भाषा और आर्य समाज को एक आयाम प्राप्त हुआ फैलने का। १९४७ में, भारत को आज़ादी मिली और एक साल बाद सरकार का पहला आयुक्त श्री धर्म यश देव मॉरीशस आये। डॉ0 शिवसागर रामगुलाम की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया और भारत से स्वामी स्वतंत्रानंद और अदन से मणिलाल डॉक्टर को २६ जनवरी १९५० को "Champs de Mars", पोर्ट लुइस में आयोजित भारत के गणतंत्र दिवस समारोह में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया।

मणिलाल डॉक्टर के मॉरीशस छोड़ने के बाद, स्वामी स्वतंत्रानंद ने आर्य समाज के दोनों गुटों के सदस्यों, परोपकारिणी और प्रतिनिधि सभा के सदस्यों से मुलाकात की और उन्हें अपनी शाखाओं को एक ही सभा में विलय करने के लिए राजी किया। इस प्रकार, "आर्य सभा मॉरीशस" अस्तित्व में आया। 'आर्य-वीर' और 'जागृति' पत्रों का भी विलय 'आर्योदय' में कर दिया गया। १९५० से आर्य सभा ने वाक्वा और लावाँचीर में दो प्राथमिक विद्यालयों के साथ और पोर्ट लुइस में गयासिंह आश्रम सहित एक पूर्ण संगठन बन गई है। भारतीय समुदाय के लिए यह संस्था एक गौरव बन गयी है। यह आंदोलन, जिसकी एक सदी पहले मामूली शुरुआत से हुई थी, एक पेड़ की तरह विकसित हुआ। इसकी शाखाएँ और जड़ें हर दिशा में फैल गईं। यह सभा १९५० के दशक से हिंदी स्कूल चला रही है। इसने कई सामाजिक-सांस्कृतिक बुद्धिजीवियों और नेताओं को जन्म दिया है, जैसे डॉ0 झगरू सीगोबिन, मोहनलाल मोहित, तिलकपरसाद कालीचरन, ब्रह्मदत्त नन्दलाल और महिलाओं में सुदेवी भीमा और लखावती हरगोबिन आदि।

पोर्ट लुई में गयासिंह आश्रम, सें पॉल में जदुननन बालगोबिन आश्रम, बेल मार, फ़्लाक में डॉ0 चिरंजीव भारद्वाज आश्रम, शेमें ग्रेनिये में फूलबस्या आश्रम बुज़ुर्गों, विकलांगों और परित्यक्त बच्चों को सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। इसके अलावा, Pointe aux Sables में 'फ़्वाये त्रोशिचिया' गंभीर रूप से विकलांग व्यक्तियों के लिए एक देखभाल गृह है और संग्राम सेवा सदन नशीली दवाओं में लिप्त लोगों को डेकेयर और नशामुक्ति उपचार और परामर्श प्रदान कर रहा है। गोविंद्रामेन आश्रम में विकलांग बच्चों का एक विशेष शैक्षिक स्कूल भी है।

निष्कर्षतः मॉरीशस में आर्य समाज की विविध सेवाएँ प्रशंसनीय रही हैं। इस संस्था ने हिन्दुओं के उत्थान में बड़े ही महत्वपूर्ण कार्य किये हैं।

Arya Samaj in Mauritius – A country of the Indian Diaspora

"Providing a new dimension – Moving from the Western to the Eastern Ocean"

Whenever someone associates himself with an organization and works with commitment, unparalleled things are prone to occur. When a respectable space mission is launched, it is called a moon shot. Swami Dayanand Saraswati had made us part of 'Arya Samaj' by sharing his vision with us. "It fills my heart with joy unspeakable…", like Swami Vivekanand said at the world conference in Chicago, "to see the mission and vision of Swami Dayanand, from Self-Awakening to World Peace" being accomplished in various corners of the world where the Indian Diaspora is to be found. Let us have a deep insight into the progress and changes that Arya Samaj has brought in Mauritius, a country of the Indian Diaspora and assisted in moving it from the Western to the Eastern Ocean.

Arya Samaj's contribution to the development of Mauritius

In the field of Education

Enlightenment has also been the prime objective of Arya Samaj. This is the main reason why, while establishing the Arya Samaj and its principles, Swami Dayanand declared; "One should promote knowledge (realization of subject and object) and dispel ignorance (illusion). The Arya Sabha Mauritius runs two primary schools – the Pandit Cashinath Kishtoe Arya Vedic Hindu Aided School and the Ramsaroop Ramgutty Aryan Vedic School. Additionally, we have three secondary schools – the Prof. Soodursun Jugessur D.A.V College Rose Belle, the D.A.V College Port-Louis and the D.A.V College Morcellement St. Andre. More than that, the Arya Sabha Mauritius also runs a tertiary institution known as the Rishi Dayanand Institute (RDI). On top of it all in Mauritius we have over four hundred branches of Arya Samaj, more than a hundred of which run afternoon Baithkaas, where children at a very young age are taught Hindi and also dharmic education. Hence, we can see that, the Arya Sabha Mauritius has left no stone unturned in providing the population of Mauritius its support in terms of education.

Women Empowerment

With the efforts and blessings of Swami Dayanand Saraswati, Arya Samaj has always strived for the emancipation of women. Arya Samaj has thus known numerous women who have reached the highest pinnacle of life be it at a personal level or at a professional level. First, Swami Dayanand founded a school specially for girls known as the 'Maha Kanya Vidyalaya'. When the Arya Samaj was set up in Mauritius, in the year 1912, an association of women started in Vacoas to sensitize their sisters about their fundamental rights and to educate them. Then, the initiative was taken by the Arya Pratinidhi Sabha, the Women's Association of the Arya Samaj, that is, the Mauritius Arya Mahila Mandal was founded in 1931 in Port Louis. It was then that, the first Women Conference took place in 1965 and was followed in 1970. More than fifty Mahila Samajs in Mauritius were present at that conference and from then onwards women started to be educated. The wife of Dr. Chiranjiva Bhardwaj, Shrimati Sumangali Devi, took the initiative to educate women in Mauritius and the first woman who became educated in Mauritius was, Sumeri Devi Parvati. From then on, we can say that the Arya Mahila Mandal has become one among those sub-committees of the Arya Sabha Mauritius which is very active. We have members like Smt. Dhanwantee Ramchurn, Smt. Radhika Munee Dhonaw, Dr. Shanti Mohabeer and many others. Arya Samaj in Mauritius has contributed a lot to the emancipation of women.

Youth Empowerment

It is said that the youth is the backbone of any healthy and happy society and economy. Taking this fact into account, the Arya Samaj has left no stone unturned in providing assistance to the youth of the Mauritian Society. Established in 1967, the Mauritius Arya Yuvak Sangh, has proved itself to be the best support to the youth of Mauritius. We have in Mauritius one Youth Wing in each district and each district has a membership of more than a hundred youths. The Mauritius Arya Yuvak Sangh has done a lot for the welfare of youngsters, by engaging them in activities of various kinds, making them strong and motivating them to stay within the parameters of the rules of Arya Samaj. We have had members like the late Prof. Soodursun Jugessur, who retired as the Vice-Chancellor of the University of Mauritius, Dr. Oudaye Narain Gangoo Arya Neta, who retired as a Senior Lecturer at the Mahatma Gandhi Institute, Shri Satyadev Peerthum, who retired as School Inspector and many others. Hence, we can see that the youth has been well empowered under the roof of the Arya Samaj in Mauritius.

Rajveer Awotar

Secretary, Vaishwik Arya Parivar Samiti

गिरमिटिया देशों में आर्य समाज

बहुत से भारतवासी यूरोपीय देशों में जाकर बस गए। लोगों ने किसी हद तक अपनी भाषा-संस्कृति- सभ्यता की रक्षा की। गिरमिटिया मज़दूर जिस भी देश में गए, वहाँ किसी-न-किसी रूप में आर्य समाज अवश्य पहुँचा। धर्म संस्कृति के साथ-साथ शिक्षा का प्रचार-प्रसार उन देशों में जितना आर्य समाज ने किया, उतना अन्य किसी भी संस्था ने नहीं किया। हर गिरमिटिया के कार्य सराहनीय हैं।

खेतों में मज़दूरी की समस्या को दूर करने हेतु भारत के लोगों को त्रिनीडाड, सूरीनाम, फ़ीजी, गुयाना दक्षिण अफ्रीका आदि देशों में ले जाया गया। इसी प्रकार हमारे लघु देश मॉरीशस में लाखों की संख्या में गिरमिटिया मज़दूर पहुँचे। कठिनतम परिस्थिति में भी जीवन-यापन करते हुए, ज्योंही सत्यार्थ प्रकाश उनके हाथ लगा, वे गोरे अत्याचारियों का मुह-तोड़ जवाब देने लगे।

उपर्युक्त सभी उपनिवेशों में प्रवासियों ने आर्य समाज के माध्यम से अच्छे कार्य किये हैं और करते आ रहे हैं। आज भी वे नई पीढ़ी को आर्य समाज की ओर लाने का निरंतर प्रयास कर रहे हैं। उदाहरणतः वे भारत के विद्वान्, आचार्य, संन्यासी आदि को बुलाते हैं एवं उनके मार्ग़ -दर्शन का लाभ ले रहे हैं। भारत से जो गिरमिटिया मज़दूर फीजी गए थे, सत्ता-पलट के बाद उनमें बहुत-से भारतीय प्रवासी फ़ीजी छोड़कर न्यूज़ीलैण्ड और ऑस्ट्रेलिया में जा बसे। ये दोनों देश आर्य समाज के कार्य-क्षेत्र में और भी सतर्कता के साथ काम करने लगे।

सर्वप्रिय प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी ने तो मॉरीशस को भारत के अनुज स्वरूप संबोधित किया है। मॉरीशस में आर्य समाज का आगमन संयोगवश सत्यार्थ प्रकाश एवं संस्कार विधि के माध्यम से हुआ। यह बात सन् १८७८- १९०२ के बीच की है। एक भारतीय सैनिक श्री भोलानाथ तिवारी भारत लौटते समय अपना अमर ग्रन्थ "सत्यार्थप्रकाश" और "संस्कारविधि" अपने ग्वाले, भिखारी सिंह को दे गये। हाथों-हाथ ये दो पुस्तकें श्री खेमलाल लालाजी के घर पहुँचीं। लाला जी शिक्षित थे। उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ा और उन के सामने दल-दल के जीवन से मुक्ति की किरणें दृष्टिगोचर हुईं। उनके मित्र श्री गुरु प्रसाद दलजीत लाल एवं जगमोहन गोपाल ने भी सत्यार्थ प्रकाश पढ़ा और मंत्र-मुग्ध हो गये। तब से भूत पूर्व आर्य रत्न श्री मोहन लाल मोहित के शब्द में" पथ-प्रदर्शक बना" क्योंकि मॉरिशस में भारतीय आप्रवासी अज्ञान-अविद्या के कारण अंधविश्वासों, अंधपरम्पराओं, कुप्रथाओं, कुरीतियों आदि में फ़ँसे हुए थे। ये दोनों सज्जन सत्यार्थ प्रकाश के स्वाध्याय के पश्चात,तन, मन, धन से वैदिक धर्म का प्रचार करने लगे। इन के साथ कुछ धर्म प्रेमी जुड़ गए, जिनमें श्री खेमलाल लाला, पंडित राम प्रसाद ओझा, पंडित मेघवर्ण अग्रगण्य हैं।

मॉरिशस में सत्यार्थ प्रकाश की देन अद्भुत है। उन दिनों, मतलब बीसवीं सदी के आरंभ तक यहाँ पर देवता-देवियों की पूजा में कालीमाई पर बलि चढ़ाने की प्रथा का प्रचलन था। इस ग्रन्थ के हाथ लगते ही वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार आरम्भ हो गया। लोगों को अंधविश्वासों से निकलने का बढ़िया रास्ता नज़र आने लगा। घर-घर में वैदिक संध्या और हवन की शिक्षा दी जाने लगी। गाँव-गाँव में छोटी-छोटी कुटियाँ तैयार होने लगीं, जिनका नाम बैठका दिया गया। बैठका बड़ों के लिए सत्संग और वैदिक शिक्षा, यज्ञ- हवनादि का केन्द्र बना। महात्मा गाँधी के परामर्श और मगनलाल मणिलाल डॉक्टर के अविरल संघर्ष ने वैदिक धर्म के प्रचार में चार चाँद लगा दिए।

मॉरीशस के आर्य समाज ने धर्म और शिक्षा को ले कर महान् कार्य किये। आर्य समाजियों ने आर्य समाज के नौवें नियम को सार्थक किया -- *" प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट नहीं रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।"*

इस उद्देश्य को सार्थक बनाने के लिए जगह-जगह पर आर्य समाज की स्थापना हुई। बैठकाओं में बैठकें लगने लगीं। दिन भर के परिश्रम के बाद रात्रि में पुरुषवर्ग इकट्ठे हो जाते थे। जो लोग कुछ हिन्दी भाषा जानते थे, वे अन्यों को सिखाने लगे। पहले तो वे' रामचरितमानस' से शिक्षा लेकर कष्टों को सहने के लिए आत्म शक्ति को प्रबल करते थे। "सत्यार्थप्रकाश" ज्ञान प्राप्त करके उनका अज्ञान रूपी अंधकार दूर होने लगा।बैठकाओं में ही शाम के समय कुछ सेवक बच्चों को हिन्दी पढ़ाते थे, साथ में नैतिक शिक्षा के अन्तर्गत वैदिक ज्ञान भी देते थे। दिन में स्त्रियाँ सिलाई-कढ़ाई, दस्तकारी आदि हस्तकार्य सिखाती थीं।

जब डॉ चिरंजीव भारद्वाज का मॉरीशस की धरा पर पदार्पण हुआ, तब जहाँ वे पुरुषों के चरित्र-निर्माण में संलग्न हुए, वहाँ उनकी धर्म-पत्नी श्रीमती सुमंगली देवी स्त्रियों और कन्याओं को हिन्दी पढ़ाने लगीं। इनके बाद भारत से बहुत सारे विद्वान् वेद-प्रचारार्थ आने लगे। आर्य समाज के इतिहास का दौरा लगाएँ तो वैदिक प्रचार को बढ़ावा देने के लिय आर्य सभा मॉरीशस ने बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से समय-समय पर भारत से विद्वानों को बुलाना आरंभ कर दिया। मॉरीशस में आर्य समाज का अन्नयन विभिन्न क्षेत्रों में हुआ। यथा -- वेद- प्रचार और शिक्षा के क्षेत्र में विशेष कार्य हुए।

पंडिता लीलामणि करीमन

International Girmitiya Conference 2023

Raj Sobrun, Manager, Arya Sabha Mauritius

I feel privileged and honoured to be associated with the organization of the "International Conference on Arya Samaj in the Girmitiya Diaspora" by the Arya Sabha Mauritius to mark the 200th Birth Anniversary of Swami Dayanand Saraswati.

Arya Sabha is holding this event with the participation of some sixty delegates from South Africa, India, Fiji, the Netherlands and Suriname as from 27th to 30th July 2023. It is an ideal moment for us to ponder upon the struggles and difficulties faced by our ancestors who left different regions of India to settle in unknown lands. They strived hard to safeguard their language and culture. We should never forget the sacrifices of our grandparents. They have instilled moral values and taught us to follow the path of righteousness.

It is a fact that the Arya Samaj has contributed a lot to mould the future of the Hindu Community across the diaspora. Efforts have been made to promote and preserve the language and culture by the four hundred Arya Samaj branches, spread across Mauritius. It is indeed a golden opportunity for us to get access to the platform created by the Sabha by hosting the International Girmitiya Conference. The participants will share their knowledge and experience and come forward with resolutions for a better future of the Arya Samaj.

This conference will also be an opportunity to pay tribute to our forefathers who have contributed immensely to set up the Arya Samaj. There are challenging situations awaiting us in all parts of the world. There is an erosion of values as a new morality is setting in. The time has come for us to turn again to the subcontinent to imbibe the values its seers and sages disseminated. We cannot ignore what India has achieved in recent years. We should draw inspiration from the country of our ancestors. This international forum will enable us to face these challenges with confidence as we are striving ahead.

I wish all the participants fruitful deliberations and thank them for participating in this memorable event. I also wish them a pleasant stay in our midst in the hope that they will take pleasant memories with them back home.

Ishvara (God) is Existent, Conscious and Blissful. He is Formless, Omniscient, Just, Merciful, Unborn, Endless, Unchangeable, Beginningless, the Support of all, the Master of all, Omnipresent, Immanent, Unaging, Immortal, Fearless, Eternal and Holy and the Maker of all. He alone is worthy of being worshipped.

2nd Principle of Arya Samaj

गिरमिटिया हिन्दी साहित्य

डॉ० इन्द्रदेव भोला, इन्द्रनाथ, आर्य शिरोमणि, हिन्दी विश्व दूत

आज भारतीय वंश के लोग विश्व के 137 देशों में 820 मिलियन की संख्या में पाये जाते हैं। भारत से मज़दूर दूसरे अनजान देशों में गिरमिटिया प्रथा से आबद्ध सन् 1834 से उपनिवेशवादियों द्वारा गन्नों के खेतों में मज़दूरी करने के लिए जाने लगे। मॉरीशस वह पहला देश है, जहाँ सर्वप्रथम सन् 1834 में भारतीय मज़दूरों के चरण पड़े थे। उसके बाद गयाना सन् 1838, त्रिनिडाड में 1845, नाताल दक्षिण अफ्रीका 1860, सूरीनाम 1873 तथा फीजी 1879 में भारतीय मज़दूर कुली गिरमिटिया प्रथा से आबद्ध वहाँ पहुँचे थे। वे फुसलाकर लाए गये थे कि पत्थर उलाटने पर सोना मिलेगा। एक तो वे प्रलोभन के शिकार हुए , दूसरे उनकी परिकल्पनाओं के सपने चूर-चूर हुए थे। उन सभी देशों में गए गिरमिटियों की दशा एक जैसी हुई तथा उनका हृदय कराह उठे – 'सोनवा के खातिर विदेशवा गइली गइल गलि गइलन सोनवा शरीर।'

विदेशों में लाए गए मज़दूरों से केवल खेतों में मज़दूरी न करवायी, बल्कि उनका धर्म परिवर्तन करने पर भी पूरा प्रयत्न किया। पर हमारे धर्म-संस्कृति निष्ट पूर्वजों ने अपने धर्म, संस्कृति, भाषा को खोने नहीं दिया, बल्कि उसकी पुष्टि में जी-जान लगा दिया। रामायण गान, सत्संग, भजन से अपनी संस्कृति एवं भाषा की रक्षा की। आर्यसमाज आंदोलन ने एक नयी मोढ़ दी। पंडित काशीनाथ किष्टो, प्रो0 वासुदेव विष्णुदयाल, पं0 मोहनलाल मोहित का भारी योगदान रहा। हिन्दी प्रचारिणी सभा ने व्याकरण सम्मत हिन्दी पढ़ाई। साहित्य सृजन में महत्वपूर्ण कार्य किये। बात सिर्फ़ मॉरीशस देश की न रही, बल्कि ऊपरकथित देशों में भी हिन्दी का पठन-पाठन, लेखन, पत्रिका प्रकाशन ज़ोर-शोर से होने लगा। तभी तो हम देखते हैं कि मॉरीशस में हिन्दी साहित्य का विकास होने लगा।

पत्र-पत्रिकाएँ धर्म, संस्कृति, भाषा, प्रचार-प्रसार का एक अच्छा माध्यम है। अपनी भाषा के प्रति अभिरुचि पैदा करती है। लोगों को लिखने, अपनी प्रतिभा चमकाने को अवसर देती है। लेखकों-कवियों को पैदा करती हैं।

भारत के बाहर 'हिन्दुस्तानी' पहली हिन्दी पत्रिका थी जो इंग्लैण्ड में सन् 1883 में सम्पादक श्री कालाकंकार नरेश के सम्पादन में छपा था। दूसरा पत्र 'ओड़ियनटल ओपिनियन' था, जो दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गांधी जी के संरक्षण में निकला था। सम्पादक थे आर्य सेवक भवानी दयाल। विश्व भर में 144 हिन्दी पत्रिकाएँ छपी है।

मॉरीशस में सबसे अधिक हिन्दी पत्रिकाएँ छपी हैं। कुल 53 पत्रिकाएँ। पहली पत्रिका 'हिन्दुस्तानी' थी। साप्ताहिक, फिर दैनिक प्रकाशन 1909 फ़ीजी देश में 33 हिन्दी पत्रिकाएँ छपीं। 'रौटलर' प्रथम हिन्दी पत्र। संम्पादक मणिलाल डॉक्टर, प्रकाशन मई 1912।

सूरीनाम में 'आर्य दिवाकर' आर्य समाज द्वारा प्रकाशित प्रथम हिन्दी पत्र। गुयाना में 'आर्गोसी' पहला हिन्दी पत्र। 'आर्य ज्योति' दूसरा पत्र वैसे ही अन्य देशों में भी हिन्दी पत्रिकाएँ छपती रही है।

यह मानना अतिश्योक्ति नहीं कि उत्कृष्ट प्रवासी साहित्य का सृजन हुआ है। प्रवासी साहित्य का अध्ययन करते हुए बड़ा आश्चर्य लगता है कि वहाँ जा बसे लोग अत्यन्त दुख-संकट झेलते हुए कैसे उन्होंने अपने धर्म, संस्कृति तथा भाषा की रक्षा की। उन्होंने अपने बल-बूते हिन्दी सीखी, सिखाई और आश्चर्य की बात है कि हमदार साहित्य का सृजन भी किया। प्रवासी साहित्यकारों की अपनी अनुभूति है। विचारों की मौलिकता है। रचनाकारों के कथ्य के अन्तर्गत मुख्यतः ये विशेषताएँ पायी जाती हैं, मानव मूल्यों एवं नैतिक विचारों पर जोर, आप्रवासियों की व्यथा-कथा का चित्रण, समाज-सुधार, देशोद्धार, भाषा, धर्म एवं संस्कृति, प्रेम की भावना की अभिव्यक्ति तथा देश की स्वाधीनता की माँग।

देश की मिट्टी की गंध, मज़दूरों की यातनाएँ, शोषण, स्वतन्त्रता आंदोलन खूब अभिव्यक्त हुए हैं। प्रवासी देशों के लेखकों, कवियों ने अपनी रचनाओं में रूढ़िमत मान्यताओं के प्रति आग्रह नारी उत्थान एवं नारी जगत् के प्रति श्रद्धा की अभिव्यक्ति की है। मज़दूरों के प्रति हुए शोषण, अत्याचार, गोरे मालिकों के अन्यायपूर्ण व्यवहारों की खूब भर्त्सना की है।

श्रावणी मास के संदर्भ में लेख

श्रावणी पर्व का संदेश

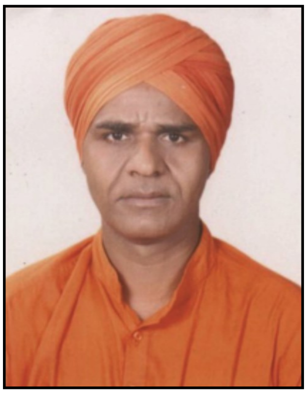

वैदिक धर्म महान् है, वैदिक संस्कृति-नीति परम्परा महान् है, क्योंकि वेद और संसार का रचयिता स्वयम्भू परमेष्ठी सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् और सर्वव्यापक सर्वतो महान् है। वेद संसार के सबसे प्राचीन ग्रन्थ हैं, इसे विश्व स्वीकार करता है। जो यश और सर्वोच्च सम्मान विश्व भर में वेदों को प्राप्त हुआ है, वह अन्य किसी ग्रन्थ को नहीं। इसमें कुछ कारण विशेष है --

वेद ईश्वर-प्रदत्त नित्य ज्ञान मनुष्यमात्र के लिए है। वेद निर्भ्रांत हैं, जिसमें तर्क-सृष्टि विरुद्ध कुछ भी नहीं है। अतः वेद को सब सत्यविद्या का पुस्तक कहा गया है। वेद मनुष्य के सर्वोच्च लक्ष्य अभ्युदय और मोक्ष का सिद्ध कराने हेतु प्रवृत्त हुए हैं।

महर्षि मनु जी ने **सर्वज्ञानमयो हि सः** और **"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्"** लिखकर वेद की महिमा का गुणगान किया है। वे कहते हैं कि पवित्र वेद ज्ञानी, ऋषि, विद्वान् और साधारण मनुष्यों का सनातन चक्षु के समान पथप्रदर्शक है। चार वर्ण, तीन लोक, चार आश्रम आदि, भूत, भविष्यत, वर्तमान विषयक समस्त ज्ञान-विज्ञान, संगत व्यवहार कर्त्तव्यबोध वेद से ही प्रसिद्ध होता है। यही वेदज्ञान सभी मनुष्यों के लिए भवसागर से पार उतरने के लिए दृढ़ नौका के समान सर्वोत्तम साधन है।

शतपथ ब्राह्मणकार महर्षि याज्ञवल्क्य जी ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद को उस महान् परमेश्वर के निःश्वास के तुल्य प्रकट हुआ मानते हैं। परमेष्ठी प्रजापति ने अपने तप और पूर्ण ज्ञान से वेदों का प्रकाश किया, जिसे त्रयी विद्या-ज्ञान-कर्म-उपासना के नाम से भी जाना जाता है।

परमाणु विद्या के प्रकाशक महर्षि कणाद जी कहते हैं, **'बुद्धिपूर्वा वाक्य कृतिर्वेद'** वैशेषिक द. 6-1-1

वेद में मंत्र रचना अत्यन्त बुद्धिपूर्वक है, तर्क -- प्रमाण के विरुद्ध कोई बात नहीं है।

सृष्टि रचना विज्ञान के प्रवर्तक ऋषि कपिल आचार्य का सांख्य सूत्र – निजशक्ति ...... स्वतः प्रामाण्यम् सांख्य 5/51 सर्वज्ञ परमात्मा की अपनी स्वाभाविक शक्ति व प्रेरणा से प्रकट होने से वेद स्वत: प्रमाण हैं, सूर्य के समान।

महान् वेदवेत्ता महर्षि वेदव्यास जी वेद को अनादि पावन ज्ञान की निधि मानते हैं, उनकी पावन दृष्टि में वेद परम चक्षु -पथ-प्रदर्शक, सर्वोत्तम बल, सबका आधार और वेद ही उनका भगवान् है।

आधुनिक काल के महर्षि दयानंद सरस्वती जी वेद महिमा का गौरव गान इस प्रकार करते हैं – "उस ईश्वर ने अपनी प्रजा-जीवात्माओं को यथावत् सत्य, सत्यविद्या, जो चार वेद उनका सब मनुष्यों के परमहितार्थ उपदेश किया है, उस दयामय पिता ने बड़ी कृपा से अविद्या अंधकार का नाशक वेद-विद्या रूप सूर्य प्रकाशित किया है....... तो वेद के बिना अन्य कोई पुस्तक संसार में ईश्वरोक्त नहीं है, जैसा पूर्ण विद्यावान् और न्यायकारी ईश्वर है, वैसा ही वेद पुस्तक है।

यह तो जीवनमुक्त ऋषियों की वाणी से वेद की महिमा का गौरव गान है। अब कुछ वेद-मंत्रों की दृष्टि में वेद का परिचय --

स्तुता मया वरदा वेद माता... *अथर्व . 19/71/1*

वेद-ज्ञान को वरदात्री -- माता कहा गया है, वह माता जो जीव का परम कल्याण सिद्ध कराने वाली है।

सं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि ॥ *अथर्व. 1-1-4*

हम वेद ज्ञान के अनुसार सदा चलें, वेद विरुद्ध कर्म कभी न करें।

..... मंत्र श्रुत्यं चरामसि ..... *ऋक् 10-134-7*

हम सदा मंत्र-श्रुति के अनुसार कर्त्तव्य-पथ पर चलते हैं, सर्वथा सर्वदा हमारा पथ वेद विहित ही रहेगा, क्योंकि हम उस वेद प्रवक्ता ईश्वर के आज्ञाकारी पुत्र हैं। हमारा आदर्श एक मात्र सर्वज्ञ ईश्वर और उनका उपदेश वेद है।

जिस मानव ने वेद-माता का अमृत दुग्धपान कर लिया, वह योग समाधि से मेघा – प्रज्ञा - ऋतम्भरा सम्पन्न होकर योगी, ऋषि, जीवनमुक्त और मोक्ष का अधिकारी बन जाता है। सृष्टि रचना और वेद-प्रकाशन का यही मुख्य प्रयोजन जो परमात्मा को इष्ट है। ईश्वर का महद् यज्ञ सृष्टि और वेद जीव के उद्धार -- परमकल्याण के लिए ही है।

स्वामी आशुतोष
वानप्रस्थ सा. आश्रम
आर्यवन, रोजड़, (गुजरात)
पिन. 383307

धार्मिक एवं सामाजिक उत्थान में बैठकाओं का योगदान

श्री बालचन्द तानाकूर, ओ.एस.के., आर्य रत्न

मॉरीशस का इतिहास पढ़ने से ज्ञात होता है कि उन्नीसवीं सदी के आरम्भ में दास-प्रथा का उन्मूलन होने के बाद यहाँ के बसे अफ्रीकी वंशजों ने गन्ने के खेतों व कारखानों में मज़दूरी करने से इनकार कर दिया था और शक्कर के उत्पादन में समस्या पैदा होने लगी थी। ऐसी परिस्थिति में ब्रिटिश सरकार ने भारतीय मज़दूरों को अनुबन्ध (Agreement) के अनुसार यहाँ लाकर मज़दूरी करने का निर्णय लिया था।

दलालों ने उन भारतीय मज़दूरों को तरह-तरह के प्रलोभन देकर सुखी जीवन व्यतीत करने का आश्वासन दिया था। इसी भरोसे पर हमारे पूर्वज अपने सारे परिवार त्याग कर अनुबन्ध (Agreement) के अनुसार मॉरीशस आए। जितने भारतीय आप्रवासी अन्य देशों में जाकर बसे, वे गिरमिटिया कहलाये, क्योंकि वे Agreement को गिरमिट बोलते थे, अंग्रेज़ी शब्द 'Agreement' नहीं बोल पाते थे।

दुर्भाग्य से जितने भारतीय मज़दूर अनुबन्ध में बन्धकर मॉरीशस आए, उनका शक्कर कोठी के मालिक एवं उनपर घोर दुर्व्यवहार, अत्याचार और अन्याय करते थे। यहाँ तक कि उन्हें ईसाई-धर्म ग्रहण के लिए विवश करते थे। ऐसी दुखद अवस्था में वे स्वरक्षा एवं अपने धर्म, संस्कृति एवं भाषा आदि की सुरक्षा में चिन्तित थे। एक साथ बैठकर उन्हें विचार-विमर्श करने के लिए कोई स्थान नहीं दिखाई देता तो शुरू-शुरू में बड़े पेड़ की छाया में बैठ जाते थे।

हमारे दुखित, पीड़ित, शोषित और असहाय पूर्वजों ने बड़े साहस के साथ शक्कर कोठी के मालिकों से मनोरंजन, भजन-कीर्तन आदि करने के लिए एक स्थान की याचना की और उनकी माँग को स्वीकार किया गया। फिर सौभाग्य से देश के गाँवों में बैठकाओं की स्थापना होने लगी, जहाँ वे साथ बैठकर अपनी दयनीय दशा, धर्म-संस्कृति, भाषा आदि की सुरक्षा पर विचार-विमर्श करते थे।

समयानुकूल बैठका एक ऐसा स्थल बन गया था, जहाँ सत्संग, कथा-वाचन, तुलसीकृत रामचरितमानस का पाठ, भजन-कीर्तन, हिन्दी शिक्षण आदि कार्यक्रम होने लगे। हिन्दुओं के सारे उत्सव भी बैठकाओं में मनाने लगे थे। हमारे पूर्वजों के लिए बैठका एक पवित्र मंदिर के समान मानी जाती थी, जहाँ वे सुख, शान्ति और आनन्द का अनुभव करते थे और ईश्वर-भक्ति में मुग्ध होते थे।

मॉरीशस में हिन्दू-जाति को विकास के पथ पर लाने के लिए 'बैठका' का भारी योगदान है। इसी के माध्यम से हमारे पूर्वजों में प्रेम, सहयोग, एकता आदि की भावनाएँ जागरित होने लगी थीं। देखने में बैठका एक साधारण झोंपड़ी के रूप में थी, परन्तु वह एक पवित्र मन्दिर सदृश थी, हवन-यज्ञ, वेदोत्सव तथा विद्या-ग्रहण करने की एक महत्पूर्ण जगह थी। हमारे पूर्वज बैठका ही में अपनी धार्मिक गतिविधियाँ करते थे। रामायण, महाभारत की कथा, सत्यार्थ प्रकाश आदि धार्मिक ग्रन्थों का पठन -पाठन करते थे।

बैठका की देन

बैठका ही वह पवित्र जगह थी, जहाँ पर सज्जनों द्वारा मानव मूल्य की शिक्षा दी जाती थी, मानव कर्तव्यों का ज्ञान प्रदान किया जाता था। धार्मिक एवं ऐतिहासिक कथाओं द्वारा मानवता का पाठ पढ़ाया जाता था। उस संकटकालीन परिस्थिति में बैठका ही एक खास जगह थी, जहाँ हमारे पूर्वजों की शारीरिक, बौद्धिक और मानसिक शक्ति बढ़ती थी।

हिन्दू-समाज के उत्थान में उस समय एकमात्र बैठका का योगदान था। बैठका ही में एकत्रित होकर समाज की कुरीतियों, कुप्रथाओं आदि का सुधार किया जाता था और आपसी सहयोग, प्रेम, और एकता के बल पर सुदृढ़ संगठन कायम होता था।

हिन्दी-शिक्षण का शुभारम्भ भी बैठका ही में हुआ था। लोग एक साथ मिलकर हिन्दी सीखते-सिखाते थे। उस समय गुरुजन श्री रामचन्द्र जी की कथा सुनाकर तथा हरि-भजन द्वारा अपने शिष्यों को हिन्दी का ज्ञान देते थे।

राम नाम लड्डू, गोपाल नाम घीव।
हरि के नाम मिसरी, तव घोर-घार पीव॥

आदि भजन सिखाकर अपने शिष्यों को आनन्दित करते थे। इस प्रकार छात्रों में हिन्दी पढ़ने की रुचि बढ़ती गई और हिन्दी तथा भोजपुरी भाषा का विकास होता गया।

झोंपड़ी के रूप में जो बैठका थी, उसी में महात्मा गांधी जी ने राजनीतिक क्षेत्र में रुचि लेने की प्रेरणा हमारे पूर्वजों को दी थी। उनकी सुलगाई हुई अग्नि धीरे-धीरे हिन्दुओं के हृदयों को प्रकाशित करती गई। फलतः राज्य सत्ता हमारे अधिकार में आ गई।

बैठका सचमुच एक ऐसा मुख्य स्थान था, जहाँ पर भ्रातृ-भाव, संघटन, एकता, ज्ञानादि का संचार हुआ था। हिन्दू-जाति के धर्म, संस्कृति, सभ्यता और भाषा आदि का विकास होना आरम्भ हुआ था। यह सर्वमान्य है कि बैठका जैसे पवित्र स्थान की बुनियाद से ही हमारे गिरमिटिया लोगों के दुखद, शोषित और दयनीय जीवन में सुधार होने लगा था। आज अगर वैदिक-धर्म, संस्कृति, संस्कार, समाज, हिन्दी भोजपुरी भाषा आदि का जो विकास हुआ है, तो उसमें बैठका का ही योगदान है।

अन्तर्राष्ट्रीय गिरमिटिया महासम्मेलन के अवसर पर हम समस्त हिन्दू परिवार बैठका के महत्व को स्मरण करें।

स्वामी दयानन्द अद्वितीय समाज सुधारक

सत्यदेव प्रीतम, जी०ओ०एस०के०, सहसम्पादक, आर्योदय

स्वामी दयानन्द साधारण व्यक्ति नहीं थे। कहावत प्रसिद्ध है, 'होनहार बिरवान के होत चिकने पात'। जिसको बड़ा होना होता है, वह छोटेपन से ही लक्षण बताने लगता है। यह सिद्ध करने के लिए हम कुछ उदाहरण गिनाना चाहेंगे।

बालक मूलशंकर अभी १३-१४ वर्ष के नहीं हुए थे कि यजुर्वेद के १९७५ मंत्रों का अभ्यास कर लिया था जब कि उस उम्र में बच्चा मुश्किल से पहाड़ याद करता है। स्वामी जी के जितने जीवनी लेखक हुए हैं सभी इस बात का ज़िक्र करते हैं, उनकी जीवनी लिखते हुए कि स्वामी जी खुद अपनी आत्म कथा में लिखते हुए कहते हैं कि यजुर्वेद के समस्त मंत्रों के साथ अन्य वेदों के कुछ मंत्र और अन्य वैदिक साहित्य के ग्रन्थों के कई श्लोक, सूत्रादि याद कर लिये थे।

दूसरा उदाहरण उनके असाधारण व्यक्ति होने के प्रमाण अभी वे कम उम्र ही के थे तो पिता अम्बाशंकर उसे जहाँ कहीं भी शिव महात्म्य का सत्संग होता था, वे उसे ले जाते थे, क्योंकि वे चाहते थे कि उनका पुत्र भी उन्हीं की तरह शिव भक्त बने।

उसी दरमियान याने जब मूल जी १३ वर्ष के ऊपर होने को आये तो पिता जी पूर्व से ही बताने लगे थे कि महाशिवरात्रि के अवसर पर यदि रात्रि जागरण करेंगे तो भगवान शिव का साक्षात्कार होगा। हमारे विज्ञ पाठकों को मालूम है कि किस प्रकार बालक मूलशंकर पिता के वचनों का विश्वासी होकर आँखों में जल के छिंटे मार-मारकर निद्रा देवी को भगाता रहा, पर अन्त में शिव के बदले क्षुद्र जीव (चूहा) शिव भगवान पर चढ़ावे को खाता रहा और शिवलिंग पर चढ़कर गंदा करता रहा। बालक मूलजी को वह दृश्य देखा नहीं गया और सोते हुए पिता जी को जगाकर ऐसे प्रश्न करने लगे, जिनके उत्तर पिता जी दे न सके और उनसे बचने के लिए अपने दो सेवकों (देह रक्षकों) से माँग की, मूलजी को घर छोड़ आने की, और बालक से माँग की व्रत न तोड़ने की। पर बाल मूलशंकर ने घर पहुँचते ही माँ से कुछ खाने की माँग की और खाकर सो गये। आगे क्या हुआ सभी पाठकों को मालूम है और आज सारे संसार को मालूम है।

ऐसे और उदाहरण भरे पड़े हैं उनके जीवन में। सभी का उल्लेख करेंगे तो जगह समाप्त हो जायगी पर उदाहरण पर उदाहरण उनके त्याग के आदर्शों के आते रहेंगे एक से एक बढ़कर।

महाशिवरात्रि की घटना के पश्चात् एक और घटना घटी, जिसको रखना उचित समझता हूँ। उनसे ३ वर्ष छोटी बहन का देहान्त हो गया। शव नीचे पड़ा था, आस-पास बैठे परिवार व पड़ोस के सभी लोग फूट-फूट कर रोदन कर रहे थे, पर किशोर मूलशंकर वहीं कोने पर दीवाल के सहारे खड़े होकर चूपचाप देख-सोच रहे थे। शिवालय में तो प्रण कर लिया था कि सच्चे शिव की खोज कर दम लेंगे और अब बहन की मृत्यु ने उन्हें विवश किया सोचने को कि यह मृत्यु क्या है ? क्या सभी को

एक दिन मृत्यु के मुख में जाना है? क्या कोई उपाय नहीं है, इस मृत्यु से बचने के लिए। इस उधेड़-बुन में पड़ा था और न रोने के कारण सब तो सब माँ भी कोसने लगी और कहा भी, "क्या पत्थर दिल पाया है, प्यारी बहन की मृत्यु पर एक बूँद अश्रु नहीं बहा रहा है?" लोगों को क्या मालूम मूलशंकर के अन्दर क्या बीत रहा था? लोगों को मालूम नहीं था कि इन घटनाओं ने भारत को उधारने के लिए एक आदर्श धर्म सुधारक व मातृभूमि को मुक्त कराने, महिलाओं व लड़कियों को जगाने वाला खड़ा है।

ऐसे बहुत कम उदाहरण हम जानते हैं, जिनकी शादी के लिए एक सुन्दर लड़की देख ली गयी हो और मूलशंकर को भी दिखाया गया था, पर वही तो दयानन्द को पितृ-गृह छोड़ने के लिए विवश किया और एक दिन भी लौटकर माँ-बाप और प्रिय जनों को देखने नहीं आया और तो और अपने गाँव का नाम भी कभी नहीं बताया। गौतम बुद्ध से भी आगे निकल गए, क्योंकि गौतम तो एक बार घर वापस आये थे और यशोधरा और पुत्र से मिले भी थे।

दयानन्द असाधारण थे। भारत के अर्वाचीन इतिहास में ऐसा आदर्श व असाधारण व्यक्ति मिलना कठिन ही नहीं वरन असम्भव है।

यह भी सिद्ध करता है कि घर त्यागा था लगभग २१-२२ साल की अवस्था में और घर छोड़ने के बाद १५ वर्ष तक अपने दो प्रश्नों के उत्तर पाने में लगाये और अन्त में ३८ वर्ष की उम्र में आँख के अन्धे गुरू विरजानन्द की कुटिया के बन्द दरवाज़े को टकटकाया और बन्द कुटिया से आवाज़ आयी "कौन?" और इधर से उत्तर मिला – "यही तो मैं जानने आया हूँ कि मैं कौन हूँ?" गुरु को लम्बे समय से इन्तजार शिष्य मिल गया और शिष्य को मनचाहे गुरु मिल गया और भारत व भारतेत्तर देशों व द्वीपों को असाधारण समाज सुधारक मिल गया।

धर्म-परिवर्तन क्यों ?

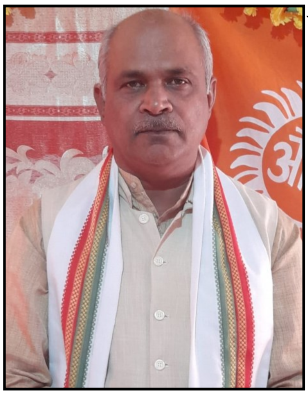

सत्यार्थप्रकाश के '**स्वमन्तव्यातन्यव्यप्रकाश:**' के अन्तर्गत महर्षि दयानन्द धर्म की परिभाषा इस प्रकार देते हैं -- "जो पक्षपातरहित, न्यायाचरण, सत्यभाषणादियुक्त, ईश्वराज्ञा, वेदों से अविरुद्ध है, उसको 'धर्म' कहते हैं।"

'धर्म' सब मनुष्यों के लिए एक जैसा है। धर्म एक है, सम्प्रदाय अनेक हैं। आज मनुष्य सम्प्रदाय और धर्म में अन्तर नहीं कर पा रहा है। सम्प्रदाय को ही धर्म मान बैठा है। आर्य समाज की मान्यता है कि ईश्वर एक है और उसका बनाया हुआ धर्म भी सबके लिए एक ही है। आज हिन्दू लोग धर्म-परिवर्तन कर रहे हैं। आखिर क्यों ? इसलिए कि कुछ लोग ज़्यादा धन के लोभ में, कुछ अधिक सुख प्राप्त करने के लिए और दूसरे लोग अन्य ईश्वर ढूँढ़ने के लिए ऐसा कर रहे हैं।

परमात्मा ने सभी को अपने कर्मानुसार, जन्म, आयु और भोग प्रदान किया है। किसी आत्मा को मनुष्य योनी में, किसी को पशु योनी में, किसी को स्थावर और किसी को अन्य योनियों में भेजा है।

मनुष्य योनी में जन्म लेने वाले भी तीन प्रकार के हैं, उत्तम, मध्यम और अधम। उत्तम प्रकार के वे हैं, जिन्होंने वैदिक माता-पिता के घर में जन्म लिया। मध्यम वे हैं, जिन्होंने धर्म-अधर्म मिश्रित आचरण करने वाले के घर में जन्म लिया है और अधम वे हैं, जो बिल्कुल धर्म में रुचि न रखने वाले के घर में जन्म लिया है।

उत्तम मनुष्य तो भाग्यशाली है। उत्तम ही रहे तो फायदे में रहेगा। सब प्रकार के सुखों को प्राप्त करेगा। मध्यम मनुष्य को उत्तम बनने का यत्न करना पड़ेगा। अधम मनुष्य अपना धर्म परिवर्तन करके मत-मतान्तरों के चक्कर में वेद-ज्ञान से दूर रहना चाहता है।

क्या ईश्वर की न्याय-व्यवस्था पर भरोसा नहीं ? जगत् नियन्ता पूरे संसार को चलाने वाला है। उसने हमें यहाँ भेजा है अपने भोग तथा कर्म करने के लिए। हम अपने धर्म से जी चुराकर भाग रहे हैं। हम जहाँ भी चले जायें, कर्म-फल से नहीं बच पायेंगे।

हिन्दू भाइयो, धर्म-परिवर्तन कर लो, हुलिया बदल लो, प्लास्टिक सजरी करके शकल भी बदल डालो, फिर भी उस परमात्मा की न्याय-व्यवस्था से नहीं बच पाओगे।

पंडित कविराज खेदू

TYACK ARYA SAMAJ

Satyarth Prakash Month
&
Official Launching of Savanne Arya Yuvak Sangh

On the occasion of Satyarth Prakash Month, a seven day Satsang was held at the seat of the Tyack Arya Samaj as from 19 June to 25 June 2023.

Daily Yajna was performed as from 5 pm followed by *Pravachan* on the 'Satyarth Prakash' by Acharya Oomah, Purohit and Purohita.

On 22 June, Yajna was conducted by Acharya Jitender Pursharth who elaborated on Chapter ten (Conduct and Diet) in the presence of Arya Neta, Dr Oudaye Narain Gangoo

Dr Oudaye Narain Gangoo stated that Chapter ten of the Satyarth Prakash deals with the desirable and undesirable code of behaviour as well as the permissible and forbidden diets. Maharshi Dayanand has quoted profusely from Manu to shed light on good and bad conduct.

He writes, "People should always bear in mind that whatsoever is done by learned men who are good and true, who are free from inordinate affection and hatred, or whatsoever is known to be true by the testimony of the inner monitor is the true conduct of life. That alone should be followed."

The other topic in this chapter is on permissible and forbidden diets Swami Ji writes that people should abstain from consuming flesh and other ingredients such as wine, cannabis, indica and opium, etc

On 25 June, *Purnahuti* was held in the presence of Acharya Prabhamitra who elaborated on the importance of the Satyarth Prakash for the betterment of our society.

The Savanne Arya Yuvak Sangh was officially launched in the presence of Members of Arya Sabha Mauritius and the Mauritius Arya Yuvak Sangh on that occasion.

The event ended at noon with Shanti Path.

Sarvam Nuckcheda
President Tyack Arya Samaj & Savanne Arya Yuvak Sangh

श्रावण मास का संदेश

महर्षि दयानन्द ईश्वर के परम भक्त थे। उनका कथन है -- उस ईश्वर से तू डर। सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में 'ईश्वर-सिद्धि' विषय पर प्रकाश डालते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती यजुर्वेद का निम्नलिखित मन्त्र उद् धृत करते हैं --

"ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्याञ्जगत् ।

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ॥"

वे इस मन्त्र को इस प्रकार समझाते हैं -- "हे मनुष्य ! तू जो कुछ इस संसार में जगत् है उस सब में व्याप्त होकर जो नियन्ता है, वह ईश्वर कहाता है। उससे डरकर तू अन्याय से किसी के धन की आकांक्षा मत कर। उस अन्याय के त्याग और न्यायाचरण रूप धर्म से अपनी आत्मा से आनन्द को भोग।"

इस समुल्लास में बताया गया है कि संसार में जो कुछ है, जो हम देखते हैं और जो नहीं भी देखते हैं, उन सबको बनाने वाला, चलनेवाला और प्रलय करनेवाला ईश्वर है। वह संसार की हर वस्तु में व्याप्त है। वह परम ऐश्वर्य की खान है। सूर्य के समान प्रकाश देने वाला है। उसकी पराजय कभी नहीं होती है। उसका जन्म नहीं होता है और मृत्यु भी नहीं होती है। पिता के समान भोजनादि का विभाग कर, सब का पालन करता है। वह सब प्रकार के धनों को देनेवाला है। ज्ञान-विज्ञानादि धनों को वेद-रूप में और बुद्धि देकर, सत्य भाषण एवं सत्य मार्ग में मनुष्यों को प्रेरित कर मोक्ष तक पहुँचाता है।

विश्व को नियम में बाँधनेवाला नियन्ता, प्रभु के न्याय से कभी कोई नहीं बच सकता है। इसीलिए महर्षि जी आगे लिखते हैं, "उससे डरकर तू अन्याय का त्याग कर"। मनुष्य को अन्याय से डरना चाहिए। अन्याय करना पाप है। पाप का फल दुख है, यह प्रकृति का नियम है। अन्याय करने वाला मर्यादा छोड़ मिथ्या भाषण, छल-कपट, पाखण्ड आदि, अन्यों को दुखी कर, खान-पान, वस्त्र-आभूषण, स्थान, मान, प्रतिष्ठा को प्राप्त करते हुए सोचता है कि वह सफल है, परन्तु समय के साथ जैसे जड़-कटा हुआ वृक्ष नष्ट हो जाता है, वैसे ही अन्याय और अधर्म करने वाला नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। जो ईश्वर के नियम में विश्वास रखता है, वह उस परमपिता के न्याय से डरकर अन्याय नहीं करता है। वह न्याय करता है।

न्यायाचरण और धर्म से मनुष्य आनन्द का योग करता है। धर्म के बारे में मनु महाराज लिखते हैं:

"धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ।

तस्मद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोऽवधीत् ॥"

मरा हुआ धर्म मारनेवाले का नाश और रक्षित किया हुआ धर्म रक्षक की रक्षा करता है। इसलिए धर्म का हनन न करना, इस डर से कि मारा हुआ धर्म कभी हम को न मार डाले। मनुष्य को अन्याय और अधर्म से डरकर रहना चाहिए। अन्याय और अधर्म का दण्ड भयानक होता है। महर्षि कर्म-फल को समझाते हुए कहते हैं कि जो नर शरीर से चोरी आदि दुष्ट कर्म करता है, उसको वृक्षादि स्थावर का जन्म मिलता है। जो वाणी से पाप करता है, उसे पक्षी आदि का जन्म मिलता है। इसी लिए जिसको पुनः मानव शरीर की अभिलाषा है, उसे ईश्वर के न्याय से डर कर, न्याय, धर्म और अच्छे कर्मों को करना चाहिए।

इस श्रावण मास का संदेश यही है कि हम ईश्वर-भक्त बनें। सच्चा ईश्वर भक्त वही बन सकता है, जो वेदों के अनुसार अपना गुण, कर्म और स्वभाव को निर्मित करता है।

पंडिता अनीता छोटी

सत्यार्थप्रकाश ज्ञान का भण्डार

जयपति पुनीत विद्यावाचस्पति बी. ए., बी. एड.

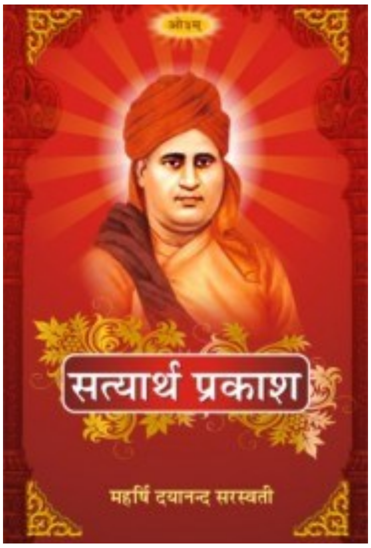

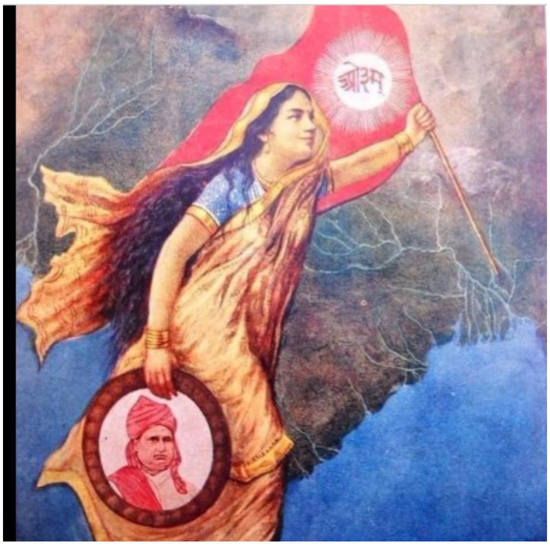

सत्यार्थप्रकाश देकर सत्मार्ग दिखाया है। अंधकार को मिटाया है ऋषि दयानंद ने।

सब छोड़ चुके थे धरम करम, गौरव गुमान ऋषि-मुनियों का।
संध्या हवन यज्ञादि करना सिखला दिया ऋषि दयानंद ने।
ओ३म् का झंडा फहरा कर जग को जगाया ऋषि दयानंद ने।।

भारत के पतन और पराधीनता का मुख्य कारण महाभारत युद्ध ही है। रामायण व महाभारत काल में आर्य व वैदिक संस्कृति का ही बोलबाला था। मूर्त्ति पूजा व हिन्दू शब्द का कहीं लेशमात्र भी वर्णन नहीं था। अवतारवादियों ने रामायण और महाभारत में शिवलिंग पूजा, देवी-देवताओं की पूजा व चमत्कारों की कहानियाँ जोड़कर इसे दूषित कर दिया था।

महाभारत युद्ध के बाद राजसभा, धर्मसभा और विद्यासभा तीनों डूब गई। केवल एक राजा की इच्छानुसार सब राज्य-कार्य होने लगा। व्यास, जैमिनि और वैशम्पायन आदि महर्षि न रहे। चक्रवर्ती राज्य नष्ट होकर यत्र-तत्र माण्डलिक राज्य स्थापित हो गए। ब्राह्मण लोगों में विद्या की कमी होती गई और अभिमान बढ़ता गया।

पूरी दुनिया पर राज्य करने वाला हमारा आर्यावर्त्त देश इस प्रकार भाईयों की आपसी फूट के कारण लगभग आठ सौ साल तक मुगलों के अधीन रहा, लगभग दो सौ साल तक अंग्रेज़ो के अधीन रहा। सैंकड़ों प्रकार के मत-मतांतर फैलते चले गए। यह महाविनाशकारी महाभारत युद्ध न होता तो देश के गाँव-गाँव में गुरुकुल होते, घर घर यज्ञ करने की प्रथा होती, वेदों का पठन-पाठन होता, कोई हिन्दू ;मुसलमान, ईसाई, जैन, बौद्ध, सिक्ख व ईसाई न होता। मंदिर, मस्जिद और चर्च के झगड़े न होते।

सत्यार्थप्रकाश का आगमन

समय ने करवटें बदलीं, वेदों के सर्वोच्च विद्वान ऋषि दयानन्द की रचना सत्यार्थप्रकाश सामने आयी। इसका उद्देश्य विश्व के लोगों को वैदिक सत्य मान्यताओं से परिचित कराकर उन्हें असत्य व अज्ञान पर आधारित अन्धविश्वासों से दूर व मुक्त करना था। सत्यार्थप्रकाश की रचना से पूर्व, देश में अज्ञान व अन्धविश्वास चरम सीमा पर पहुँच गये थे। पाषाण व धातुओं की मूर्तियों को बनाकर उसे ईश्वर बताया जाता था और उसमें अर्थहीन व बुद्धिहीन तरीकों से प्राण प्रतिष्ठा कर पूजा की जाती थी। आज भी यह कार्य जारी है परन्तु आज मूर्तिपूजा करने वाले भी जानने लगे हैं कि ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अनादि, नित्य व सृष्टिकर्ता हैं। वेदों के ज्ञान व उसकी महत्ता युक्ति व तर्क से सिद्ध किया जा चुका है। वेदों की भाषा भी विश्व के साहित्य में बेजोड़ व अन्यतम है। गुणों के आधार पर संसार की कोई भाषा इसके सम्मुख नहीं ठहरती।

वेद संसार के सबसे प्राचीनतम व आदि ग्रन्थ हैं। वेद से पूर्व संसार में कोई अन्य ग्रन्थ नहीं था। मनुष्य के अन्दर वह सामर्थ्य नहीं कि वह विविध विषयों वाले वेद के समान कोई और महान व विशाल ग्रन्थ की रचना कर सके । यह सर्वनियन्ता व सर्वज्ञ ईश्वर का नित्य ज्ञान है जो सदा एक जैसा रहता है, जिसमें कभी कोई परिवर्तन व परिवर्धन नहीं होता। इतना ही नहीं यह वेद ज्ञान पूर्व कल्पों में ऐसा ही था और बाद के कल्पों में भी ऐसा ही रहेगा। इसी कारण इसे ईश्वर का नित्य ज्ञान कहते हैं। यह स्वयं में पूर्ण व निर्दोष है, अतः कभी किसी परिवर्तन व संशोधन की इसमें आवश्यकता नहीं पड़ेगी। सत्यार्थप्रकाश वेदों की विशेषताओं को अपने अन्दर समेटे हुए है, जिससे संसार के लोग वेदों से परिचित हो सकें और मिथ्या मतों को मानना छोड़कर सत्य व ईश्वर की वाणी वेद का श्रवण, चिन्तन, मनन, आचरण व पालन करें, जिससे उन्हें इस जन्म में अभ्युदय और मृत्योत्तर जीवन में मोक्ष वा मुक्ति की प्राप्ति हो सके। सत्यार्थप्रकाश केवल वैदिक मान्यताओं और सिद्धान्तों का प्रचार और प्रसार ही नहीं करता अपितु यह असत्य व मिथ्या मान्यताओं व मतों से भी देश व संसार के लोगों को परिचित कराता है और असत्य, अज्ञान, अन्धविश्वास व कुरीतियों से दूर होने को प्रेरित करता है।

सत्यार्थप्रकाश का प्रभाव

सत्यार्थप्रकाश का प्रभाव सभी मत-मतान्तरों पर पड़ा है । आज अधिकांश ऐसे अनुयायी हैं जो सत्य व असत्य की कसौटी को सामने रखकर अध्ययन करनेवाले हैं। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में जिन सामाजिक सुधारों की बातें की थीं, उनको प्रायः देश विदेश में स्वीकार कर लिया गया है। सभी माता पिता अपनी सन्तानों को अच्छी शिक्षा दिलाना चाहते हैं, जिसकी चर्चा स्वामी दयानंद ने सत्यार्थप्रकाश के तीसरे समुल्लास में की है। छुआ-छूत व अन्य भेदभाव काफी कम हुए हैं । जन्मना जातिवाद भी कमजोर हुआ है। समाज में गुण-कर्म-स्वभावानुसार विवाह हो रहे हैं। स्वामी दयानन्द से पहले स्त्रियों व शूद्रों अथवा दलितों को वेदों के अध्ययन का अधिकार नहीं था। आज न केवल हिन्दू व वैदिक परिवारों के लोग ही वेद पढ़ते हैं अपितु मुस्लिम व पश्चिम के कुछ लोग भी वेद पढ़ रहे हैं ।

आर्यसमाज ने शुद्धि का आन्दोलन आरम्भ किया था जिसे आज सभी हिन्दुओं ने भी स्वीकार कर लिया है। बहुत सी मुस्लीम लड़कियाँ स्वेच्छा से वैदिक विधि अनुसार शुद्धि स्वीकार कर हिंदू लड़कों से विवाह करके सुख का अनुभव कर रही हैं। हिन्दू परिवारों में इतर मत-मतान्तरों की वधुएँ व कन्याएँ भी स्वीकार की जाने लगी हैं। दलित परिवारों के अनेक लोग आर्यसमाज के गुरुकुलों में पढ़कर वेदों के वरिष्ठ व उच्च कोटि के विद्वान बने हैं और बड़ी संख्या में आर्यसमाज में पुरोहित हैं जो आर्यों व हिन्दू परिवारों में संस्कार कराते हैं। आर्यसमाज में वेदों की विदुषी नारियों की भी पर्याप्त संख्या है जो गुरुकुलों में अध्ययन कर समाज का गौरव बनी हैं। अनेक स्थानों पर वृहद्-महायज्ञों में ब्रह्मा के पद पर नारियाँ प्रतिष्ठित होती हैं।

आज का समाज विज्ञान व तर्क की कसौटी पर सिद्ध बातों को स्वीकार करता है जिसको सत्यार्थप्रकाश ने ही समाज में प्रविष्ट कराया है अन्यथा देश में *पुराण वाक्यं प्रमाणम्* का व्यवहार हो रहा था। अनेक मतों ने सत्यार्थप्रकाश के आलोक में अपने मत की पुस्तकों की व्ययाख्याओं में परिवर्तन भी किया है। आर्यसमाज में सत्यार्थप्रकाश व ऋषि दयानन्द की पंचमहायज्ञविधि तथा संस्कार विधि के आधार पर पंच महायज्ञों के अन्तर्गत सन्ध्या व हवन का अनुष्ठान किया जाता है। ऐसा ही कुछ कुछ सनातनी विद्वान भी करने लगे हैं ।

सत्यार्थप्रकाश और ऋषि दयानन्द की विचारधारा का समस्त विश्व पर प्रभाव पड़ा है। अन्धविश्वास बहुत हद तक समाप्त हुआ है । जीवन शैली में परिवर्तन आया है। आज ईश्वर आस्था का ही विषय नहीं अपितु इसे तर्क व युक्तियों से भी सिद्ध किया जा सकता है। सृष्टि की उत्पत्ति व इसके उद्देश्य का ज्ञान भी संसार के लोगों को महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के माध्यम से कराया है । विश्व के लोग आज जो योग कर रहे हैं वह योग भी ऋषि पतंजलि की देन है जिसका आधार भी वेद ही हैं । यदि व्यापकरूप से देखें तो आज का विश्व ऋषि दयानन्द के विचारों से बहुत प्रभावित हुआ है। सर्वत्र सत्य, तर्क, युक्ति व विज्ञान प्रतिष्ठित हैं। उन्होंने परकीय मतों के अज्ञान से पूर्ण कथनों व मान्यताओं की आलोचना की है, इसके साथ ही अपने मत की अनेकानेक अज्ञान से युक्त मान्यताओं को अस्वीकार कर उनका सुधार किया है। अतः यह निर्विवाद है कि सत्यार्थप्रकाश का देश-विदेश के जन समुदाय पर प्रभाव पड़ा है । ◙

ओ३म् ॥ अग्ने गृहपते सुगृहपतिस्त्वयाऽवनेऽहं गृहपतिना भूयास ँ्सुगृहपतिस्त्वं मयाएग्ने गृहपतिना भूयाः ।
अस्थूरि णौ गार्हपत्यानि सन्तु शत ँ् हिमाः सूर्य्यस्यावृत मन्वावर्ते ॥

(यजुर्वेद २/२७)

भावार्थ -- हम दोनों स्त्री-पुरुष पुरुषार्थी होकर जो इन सब पदार्थों के योग्य संसाररूपी घर की निरन्तर रक्षा करने वाले जगदीश्वर और विद्वान् हैं, उनका आश्रय करके भौतिक अग्नि आदि पदार्थों से स्थिर सुख, करने वाले सब काम सिद्ध करते हुए सौ वर्ष जीवें तथा जितेन्द्रियता से सौ वर्ष से अधिक भी सुखपूर्वक जीवन का भोग करें।

मनुष्य इस संचार में कर्म करने के लिए आता है। प्रश्न है वह कर्म किसके लिए करे ? उत्तर है, परिवार के हित के लिए। परिवार का हित ही उसका लक्ष्य है, जो कुछ भी करता है, एक सीमा में रहकर करता है, यही उसकी परिधि है। उसे अपने परिवार के लिए उत्तम गृहपति बनना है, इसके लिए तेज, ओज, वर्चस और सहयोग की आवश्यकता पड़ती है। इन सब शक्तियों को प्राप्त करने के लिए, वह परमात्मा से प्रार्थना करता है। वह परमात्मा के समान सुगृपति बनना चाहता है, क्योंकि यह सारा संसार परमात्मा का घर है। संसार के सभी प्राणी उनकी सन्तान हैं। वे समान दृष्टि से सबका लालन-पालन करते हैं । उनका परिवार बहुत बड़ा है, परन्तु कहीं भी कोई असन्तुलन या कमी नहीं है। परमात्मा अग्नि के समान अग्रणीय है। वे अपने यजमान परिवार को सूर्य के द्वारा अपनी ऊर्जा और तेज प्रदान करते हैं।

उत्तम कार्य करने वाला यजमान सुगृहपति बन जाता है और अपने परिवार का लालन-पालन परमात्मा के उपदेशों और नियमों के आधार पर करता है। जो यजमान आलस्य त्यागकर प्रभात वेला में उठकर ब्रह्मयज्ञ और अग्निहोत्र करता है, उसे बिना माँगे ही सभी ऐश्वर्यों की प्राप्ति हो जाती है। वह सूर्य के प्रकाश और ऊर्जादि को प्राप्तकर दिन-रात के चक्र के अनुकूल होकर सौ या उससे भी अधिक वर्ष सुख प्राप्त करता है।

यज्ञ यजमान को आकर्षक बनाता है। यजमान परमात्मा से प्रार्थना करता है कि मैं उत्तम वाणी आदि से पवित्र होकर घर को यज्ञ-वेदी के समान बनाकर परिवार वालों के साथ यज्ञ करता हुआ स्नेहपूर्वक उत्तम पदार्थों से घर व परिवार को शुद्ध रखूँ। जैसे पृथ्वी विविध प्रकार से सबका कल्याण करती है, वैसे ही मैं भी अपने परिश्रम से उत्तम पदार्थ को संचित करके अपने परिवार का कल्याण करूँ। जैसे ओखली में कूटकर अन्न का छिलका हटाकर उत्तम अन्न का भोग किया जाता है, उसी प्रकार मैं अन्दर की बुराइयों को हटाकर उत्तम कर्म द्वारा अपने परिवार को सुखी व आनन्दित करूँ।

सुगृहपति यदि यजमान बनकर श्रद्धा से यज्ञमय कर्म करता है, तो तैंतीस देवता उसकी सहायता करते हैं। ये तैंतीस देवता हैं - आठ वसु: जैसे -- सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश, ग्यारह रूद्र, दस प्राण, जैसे -- प्राण-अपान, व्यान, समान, उदान, नाग, कर्म, कृकल, देवदत्त, धनंजय और ग्यारहवाँ जीवात्मा। बारह आदित्य अर्थात् बारह मांस :- चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, पौष, माघ्य, अगहन और फाल्गुन। फिर देवों का देव महादेव अर्थात् 'परमात्मा' और दूसरा जो पूर्ण विद्वान् है। ये सब सुगृपति के यज्ञ में सहायता करते हैं, जिससे इन सब का साथ पाकर वह अपने परिवार के साथ स्वस्थ, सुन्दर और सुख-पूर्वक रहता है।

यदि यजमान अपने परिवार में सुख चाहे, तो उसे तीन अग्नियों को साथ लेकर चलना है। चूल्हे की अग्नि, आत्मा में संकल्प की अग्नि और यज्ञ-कुण्ड की अग्नि। इन तीनों अग्नियों के द्वारा वह पँच महायज्ञ -- ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेवयज्ञ, एवं अतिथि यज्ञ में को करता हुआ घर में परिवार के साथ आनन्दपूर्वक रहता है। संसार में जितने भी उपकारक पदार्थ हैं, उनका उत्तम रीति से सेवन करते हुए अपने परिवार की उन्नति करता है। शक्ति पैदा करने वाले अन्न से, वायुमण्डल को पवित्र करने वाले यज्ञ से, अपने घर को पवित्र रखता है। यदि वह उत्तम अन्न, वस्त्र और अन्य आवश्यक पदार्थों द्वारा माता-पिता, गुरुजन आदि वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध, पूर्वजों की सेवा करता हुआ उनका आशीर्वाद लेता है, तो वह सदा धनैश्वर्यों से सम्पन्न रहता है। बड़ों का आशीर्वाद अति आवश्यक है, उनकी छाया सबकी रक्षा करती है। जिस घर में बड़ा गृहपति बड़ों का सम्मान करता है, उसे सुगृहपति बनने से कोई रोक नहीं सकता।

निष्कर्षत: उपर्युक्त यजुर्वेदीय मन्त्र पारिवारिक जीवन को सुखमय बनाने का आदेश, उपदेश और संदेश देता है। यदि दम्पति अपने गृहस्थाश्रम को सफल बनाने चाहें तो उन्हें उक्त मन्त्रानुसार आचरण करना पड़ेगा।

पंडिता राजवंश सॉलिक

सत्यार्थप्रकाश में १४ समुल्लास

समाज में १४ के अंक का बड़ा महत्व है

1. मूलशंकर ने १४ वर्ष की उम्र में शिव चतुर्दशी का व्रत रखा था।
2. जब अंतिम बार घर से निकले तो गुरु ढूँढ़ने में १४ वर्ष लगे।
3. वेदांग ग्रन्थ में १४ अध्याय हैं।
4. महर्षि दयानन्द को भ्रमण करते, प्रचार करते और शास्त्रार्थ करते जीवन में १४ बार विषपान करना पड़ा।
5. एक विद्वान् ने तो बहुत पहले लिखा था कि जिस दिन महर्षि ने प्राण त्यागे उस समय चतुर्दशी थी।
6. देवताओं ने समुद्र मन्थन किया तो १४ रत्न निकले।
7. भगवान् राम को १४ वर्ष का वनवास मिला।
8. योगीराज कृष्ण विवाह के पश्चात् १२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया। १४ वर्ष के बाद प्रद्युम्न उत्पन्न हुआ।
9. आर्यसमाज के मूर्धन्य विद्वान् पंडित चमुपति ने एक पुस्तक 'चौदहवीं का चाँद' लिखी।
10. अमावस्या / पूर्णिमा १४-१४ दिन के पश्चात् आती है।
11. दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की स्थापना १४ सितम्बर को हुई।
12. महर्षि दयानन्द Public School राजौरी garden नई दिल्ली की स्थापना स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने १४ जुलाई १९८५ को की थी।
13. भारत में १४ सितम्बर को हिन्दी दिवस मनाया जाता है।
14. महर्षि दयानन्द अपने आत्म चरित्र में लिखते हैं, मेरी १६ वर्ष की अवस्था के पीछे १४ वर्ष की बहन थी। उनको हैजा हुआ और ४ घण्टों में उसका शरीर छूट गया।

पंडित धर्मेन्द्र रिकाई

Loneliness

The sky turns red
The moon is not visible
Some stars twinkle
From bright to faint
A bird beautiful goes on chirping
The song of loneliness
The trees stand still
The air does not move
The air turns dark
The dogs bellow, bark and bite
To the wider spread of loneliness

The glow from the lamp fades
The road goes straight
To the churchyard gate
Some women and men move fast
In the dark hours of loneliness
It is time to sleep
Young ones listen
To tales of their grandparents
About days gone by
Men come, men go
Leaving behind them

The dust of loneliness

Sookraj Bissessur